जो हम अब तक भूल न पाए

(dgkuh lxg)

tk ge vc rd Hkky u ik,

(dgkuh lxg)

Mk- Ñ".k dekj

vk/kkjf'kyk idk'ku

ı fnYyh ı ngjknu ı uuhrky

tk ge vc rd Hkwy u ik,
(dgkuh lxg)

Mk- Ñ".k dekj
iFke lLdj.k% 2017

© lokf/dkj ljf{kr

ISBN-

eY; % `&

idk'kd%
vkèkkjf'kyk idk'ku
cMh e[kkuh] gY}kuh]
uuhrky (mÙkjk[k.M)&263139
ngjknu % fnYyh
ek- % 09410552828
E-mail: adharshila.prakashan@gmail.com

Jarav or anya Kahaniya By Jitendra Sharma

मैं अपने तीसरे कहानी संग्रह को पत्नी चित्र कुमार,
पुत्र डॉ. प्रारब्ध कुमार, पुत्रवधू नैथलीब्यूर्ग,
पौत्र एवं पौत्री आदित्य एवं अनन्या खरे, के साथ
गीतांजलि बहुभाषी साहित्यिक समुदाय के
सभी सदस्यों को समर्पित करता हूँ ।

viuh ckr lhèkh ckr

यह कैसी विडम्बना है कि हिन्दी साहित्य की जिस विधा से मैंने 1954 के आस-पास प्रवेश किया था वह मेरे प्रकाशन क्रम में लगभग सबसे बाद में आई। कारण यह रहा कि मैं एक कारणवश काव्यजगत में अधिक रमने लगा और इसी में 1958 तक विचरता रहा। वास्तव में मेरे पहले काव्य संग्रह को लखनऊ के तत्कालीन 'गंगा पुस्तक माला' के माध्यम से 1958-59 में प्रकाशित हो जाना चाहिए किंतु नियति ने मेरे साथ कुछ ऐसे खेल खेले कि इसको 1999 तक की प्रतीक्षा करनी पड़ी। ऐसा क्यों हुआ इसकी अपनी ही एक लम्बी रोचक, अकल्पनीय, मार्मिक कहानी है जो कभी मेरे प्रिय सुधी जनों के सामने पूर्णरूप में आएगी अगर फिर नियति ने खेल नहीं खेला और काल मेरे पीछे ही नहीं पड़ गया। मेरा पहला कथा संग्रह 'क्यों, क्यों और आखिर क्यों' मित्रों के स्नेह के कारण प्रभात प्रकाशन के माध्यम से ग्रंथ अकादमी द्वारा 2012 में प्रकाशित हुआ था, जिसमें विभिन्न तरह की 12 कहानियाँ थीं। इसकी भूमिका अनुजवत स्वर्गीय प्रो. कृष्ण दत्त पालीवाल जी ने लिखी थी। इसमें उन्होंने पहले ही वाक्य में लिखा था- 'मेरे लिए प्रसन्नता की बात है कि प्रो. कृष्णकुमार वादों-नारों-फार्मूलों से दूर रह कर कहानी की सर्जनात्मकता में कहानीपन को बचाते हुए कहानियाँ लिख रहे हैं।'' मेरे विचार से प्रो. पालीवाल की पैनी दृष्टि ने मेरी अन्तरात्मा को पकड़ लिया था। इसी भूमिका में वह आगे लिखते हैं- ''मैं यह निवेदन भी करना चाहूंगा कि प्रो. कृष्णकुमार की इन जीवन वैविध्यमय कहानियों के सौंदर्य को खालों में बाँट कर देखने का प्रयास गलत दृष्टिकोण को अपनाना होगा। विदेश में लंबे समय से रचे-बसे कवि-निबंधकार, कहानीकार को हमें नए संदर्भों की सर्जनात्मकता के साथ पढ़ना चाहिए। इन कहानियों के शब्द एवं विचारखंड जीवनहीन और बनावटी नहीं हैं। इस दृष्टि से इन कहानियों में कथ्य और रूप की नवीन प्रयोगधर्मी दृष्टि है। इस दृष्टि का स्वागत किया जाना चाहिए, क्योंकि यह जीवन-दृष्टि विजातीय बौद्धिकता को अस्वीकार करने का साहस करती है।'' काश प्रो. पालीवाल मेरे इस तीसरे कहानी संग्रह की भूमिका लिखने के लिए हम लोगों के बीच होते। अगर ऐसा हो पाता तो पाठक वर्ग का परम कल्याण होता और मेरा सौभाग्य। किंतु जब श्रीराम जी को ही काल लेकर चला गया तब साधारण मानव

तो इससे कब बचा है। ईश्वर ने उनकी आत्मा को अपने में ऐकात्म्य करके परमगति प्रदान की होगी, ऐसा मेरा मानना एवं विश्वास है।

विगत कुछ वर्षों में मैंने कई मंचों से कहा और उपयुक्त जगहों पर लिखा भी है कि हर विधा के अपने-अपने मूल्य एवं मापदंड होने के साथ-साथ सबके कुछ शाश्वत स्थायी मेरुदंड की तरह आधार भी होते हैं। जैसे, शरीर में आत्मा, कविता में गेयता का होना चाहे वह छंदबद्ध हो या छंदमुक्त। कविता में निरझरिणी की तरह प्रवाह होना ही चाहिए। ठीक इसी प्रकार हर कहानी में कम से कम कहानीपन तो होना ही चाहिए। इसकी अनुपस्थिति में कहानी प्राणहीन होकर पाठकों के मन को छूने में अक्षम ही रहती है। भाव एवं भाषा-शैली में संतुलन बनाए रखने वाली कहानी ही जीवंत हो पाती है जैसी मुंशी प्रेमचन्द्र की 'बूढ़ी काकी एवं कफ़न' या चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था'।

मन-मस्तिष्क के सम्भोग (फ्यूज़न) से उत्पन्न, रचनात्मक उत्पाद, पद्य या गद्य को साहित्य के निकष पर अपने आप को प्रभावी सिद्ध करने के लिए दो मुख्य महातत्वों को अपने-अपने अवयवों सहित अपने गर्भ में संजो कर रखना होता है। इनके बिना रचना निष्प्राण हो अपनी छाप छोड़ने में विफल हो जाती है। ऐसा होने पर इनके शिल्पी रचनात्मक उत्पाद जगत में मृत्यु के कगार से लटके पाए जाते हैं। यह इनके लिए तो कष्टप्रद एवं हानिकारक तो होता ही है साथ-साथ साहित्य जगत के लिए भी यह जीवंत क्षति होती है। ऐसा होने को सबको बचाना चाहिए और प्रत्येक साहित्यकार को इसकी रक्षा करनी चाहिए। संवेदनशीलता एवं संप्रेषणीयता-ये वे दो महातत्व हैं। संवेदनशीलता के अंतः में निहित हैं- भाव, भावना, विवेक, चिंतन एवं पात्रों की जीवंतता तथा संप्रेषणीयता के सार्थक होते हैं- पात्रों की भाषा, शैली, अभिव्यक्ति एवं इनका सरिता की तरह निरंतर प्रवाह। संप्रेषणीयता रचना को पठनीय बनाती है तथा संवेदनशीलता इसको प्रभावी एवं ग्राहक। किसी भी रचना में इन दोनों का सही अनुपात में विद्यमान होना सृजक की कुशलता एवं अनुभव का द्योतक होता है। उन्नीसवीं सदी के भारत प्रेमी हिंदी सेवी फ्रेडरिक पिंकाट के अनुसार भाव भाषा पर भारी रह सकता है किंतु अन्यथा होना रचना की हत्या कर सकता है। प्रत्येक रचनावधू यह चाहती है कि सृजक उसका नखशिख श्रृंगार ऐसा करे कि वह अपने हर कर्तव्यों का यथोचित निर्वाह कर सबका जीवन सार्थक बना सके।

विगत कुछ वर्षों में, विशेषतया, कथा साहित्य, अनेकानेक कारणों से भटक कर दिशाहीन हो अपने गंतव्य तक नहीं पहुंच पा रहा है। और यही कारण है कि इनके पाठकों का संसार भी सिमटता जा रहा है। यद्यपि आज भी काव्य की तुलना में गद्य रचनाओं के पाठक ज्यादा हैं। यही कारण है कि कहानी संग्रह के रचनाकारों को

प्रकाशक सुगमता से मिल जाते हैं। ऐसी कृतियाँ संवेदनशीलता के निकष पर खरी नहीं उतर पाती और पाठकों को अपना बनाने में असफल रहती हैं। इनमें सब कुछ होते हुए भी पाठकों के साथ सम्भोग नहीं कर पातीं। कहानी में अगर कहानीपन के तत्व नहीं होते हैं तो वह कहानी की संज्ञा से सम्मानित नहीं की जा सकती। सबसे बड़ा दुःख तो इस बात का है कि अनेकानेक तथाकथित स्थापित एवं कथाजगत में सम्माननीय वरिष्ठ रचनाकार एवं सम्पादक कुछ चुनिंदा युवा कथाकारों की महातत्वहीन रचनाओं की बढ़ा-चढ़ा कर प्रशंसा कर उन्हें, जाने या अनजाने दिग्भ्रमित कर रहे हैं। ये युवा रचनाधर्मी सशक्त दमदार रचनाओं का सृजन करने में समर्थ अवश्य हैं किंतु विगत कुछ वर्षों में तो उन्होंने भावहीन, असुंदर भाषा के साथ अनावश्यक कुछ अश्लील एवं अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग कर, मेरे विचार से, हिंदी साहित्य को कमजोर बनाया है। कहानी की आत्मा ऐसी परिस्थितियों में बिलखती रह जाती है और ऐसी रचनाओं के विधाताओं का इस ओर ध्यान तक नहीं जा पाता क्योंकि उनके ऊपर कुछ वरिष्ठ कलमकारों का हाथ जो रहता है। दुःख तो इस बात का, और अधिक, है कि ऐसे संक्रामक प्रोत्साहनों का प्रभाव प्रवासी रचनाओं में भी आने लगा है जिनकी भाषा पहले भले ही संस्कृतनिष्ठ न रही हो फिर भी भाषा एवं भाव का अनुपात लगभग ठीक ही रहता था तथा अश्लील शब्दों का प्रयोग नहीं होता था। अब प्रवासी रचनाकार भी बाजारवाद के बहाव में आकर अपनी कृतियों के साथ बलात्कार करने में नहीं झिझक रहे हैं और वे वही कर रहे हैं जो 1997-98 में सुश्री माया गोविंद जी ने बड़ी ही बेबाकी से स्पष्ट कहा था- 'मैं तो अच्छे गीत चलचित्र जगत के लिए लिखना चाहती हूँ- लिख सकती हूँ किंतु निर्देशकों के आदेशों के कारण मुझे अपने शब्दों को बदलना पड़ता है क्योंकि वे कहते हैं कि, फिल्मों को देखने वाले जो चाहते हैं, वही आपको लिखना पड़ेगा। और मुझे भाषा की दृष्टि से मजबूरन कमजोर गीत लिखने पड़ते हैं और वे पसंद भी किए जाते हैं।' मेरी तो हर कथा साहित्य के उन्नायकों से विनम्र अनुरोध एवं प्रार्थना है कि वे नवीं शताब्दी के उद्‌भट विद्वान काव्यालंकार जैसी पुस्तक के रचयिता उद्रट की आत्मा को चोटिल न होने दें, परिवर्तन को आने दें किंतु मेरुदंड को तोड़ कर नहीं। माना कि ई.एम.फारेस्टर के सिद्धांतों से हम बहुत आगे निकल आए हैं किंतु कथा साहित्य को कथा साहित्य ही रहने दें तो अच्छा होगा। अमेरिकन दार्शनिक मार्क ट्वेन के मतानुसार प्रोत्साहन अवश्य दें किंतु गलत व्यक्ति की अनउपयुक्त रचना की प्रशंसा, क्षणिक लोभ के कारण, न करें।

कथा साहित्य में मेरे नाम से प्रकाश में आने वाली यह चौथी कृति है। इनमें से दो- 'क्यों, क्यों और आखिर क्यों' एवं 'और कथाएं ऐसी भी' मेरी ही कहानियों के संग्रह हैं। इन दोनों में 12-12 कहानियाँ हैं। तीसरा मेरे द्वारा सम्पादित गीतांजलि

समुदाय के 9 सदस्यों की 18 कहानियों का विविधतापूर्ण संग्रह 'अपनी उम्मीदों के साथ' है, जिसका प्रकाशन 2012 में शिल्पायन के माध्यम से हुआ था। यह चौथा, मेरा अपना तीसरा संग्रह- 'जो हम अब तक भूल न पाए' नवीनतम 12 कहानियों का गुलदस्ता है।

संग्रह की पहली कहानी 'यह कैसी मान्यता' घाना राज्य के यू.के. में प्रवासी रिचर्ड एवं जेनीफर के जीवन की अकल्पनीय किंतु सत्य कथा है जिसका आधार वहाँ की अजीबोगरीब प्रचलित मान्यता से जुड़ा है। ऐसा रिचर्ड ने लोगों को बताया कि घाना में कुछ पुरानी चीजों की कीमत नई की अपेक्षा ज्यादा होती है क्योंकि ऐसे उत्पादों ने अपनी उत्पादकता को स्थापित कर लिया होता है। उसने यह भी बताया कि यही हाल लोगों का अपनी पत्नी के चयन के समय होता है मतलब जब तक यह स्थापित नहीं हो जाता कि एक स्त्री गर्भ धारण कर माँ बन सकती है तब तक लोग उसको अपनी पत्नी का पद नहीं देते। इस कहानी के माध्यम से ऐसी असाधारण-अमानवीय मान्यताओं के विरुद्ध बिगुल बजाने का प्रयास है।

'समय का नासूर' संग्रह की दूसरी कहानी यू.के. के उस सामाजिक 'टाइम बम' की कहानी जिसकी उत्पत्ति सांस्कृतिक टकराव एवं समाज के कुछ तथाकथित ठेकेदारों की विकृत सोच के कारण होती है जिसमें न्याय का गला घोट कर अराजकता का बीजारोपड़ कर गैरी जैसे आतंकवादी को प्रोत्साहन दिया जाता है। बर्तानिया के स्कूलों में रंगभेद के कारण होने वाले अत्याचार जगजाहिर हो चुके हैं। तमाम लिखा गया है किंतु फिर भी जड़ों तक पहुंच चुकी इस दुर्दशा के अंत होने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं।

'जीवन चक्र' जो संग्रह की तीसरी कहानी है एक फ्रेंच परिवार के माध्यम से अपने आप में एक बहुत बड़े सत्य का खुलासा सा करने का प्रयास करती है और वह यह कि जीवन चक्र-जीवन-मृत्यु-जीवन केवल हिंदू धर्म की मान्यता एवं इसका आधार नहीं वरन् यह किसी न किसी रूप में प्रत्येक मानव के होने से जुड़ा है। तीन पीढ़ियों में हुई घटनाएं कुछ हद तक इस तथ्य को बड़ी सफलता के साथ स्थापित करती हैं। 'जूते की वापसी' संग्रह की चौथी कहानी का परिवेश भारत एवं यू.के. के बीच विभाजित है। खंडित मानसिकता को उजागर करती यह कहानी, सम्भवतः, सत्य होते हुए भी काल्पनिकता का चोला पहने प्रतीत होती है। अपनी झूठी आकृति के दम्भ को सुरक्षित रखते हुए एवं अच्छा लगने की ललक को प्रदर्शित करती है। संग्रह की पांचवीं और छठी कहानी की पृष्ठभूमि कैंसर से पीड़ित एक ऐसे व्यक्ति की है जिसके बारे में डाक्टरों ने साफ कह दिया था कि 'वे कुछ नहीं कर सकते किंतु फिर भी जीवोत्परीक्षण की रपट आने तक अपने वार्ड में रहने की आज्ञा दे दी

थी।' यह मरीज कैंसर जैसी घातक बीमारी से लड़ता है। मान्यताओं के विरुद्ध आपरेशन होता है और इस दौरान मॉर्फीन के इंजेक्शन के कारण उसकी जो हालत होती है उसका चलचित्रमय वर्णन पांचवीं कहानी 'तुम्हे छूना चाहता हूँ' में किया गया है। छठी कहानी 'छत्तीस दिन का घर' इसी मरीज के अस्पताल में बिताए 36 दिनों का दस्तावेज़ है जिसकी तुलना महाभारत के 18 दिनों के भयंकर युद्ध से की गई है। दोनों कहानियों का परिवेश यू.के. का एक बड़ा शहर बर्मिंघम है।

'जो हम अब तक भूल न पाए' की सातवीं कहानी 'यह कैसा लेना-देना' समाज के कई जटिल पक्षों को सामने लाती है जिसमें एक ओर पैसों की ज़रूरत की खातिर लोग क्या-क्या और क्यों कर बैठने को मजबूर हो जाते है वहीं दूसरी ओर मानवता का एक बहुत बड़ा पक्ष सामने आता है जब सिलविया पीटर-लिज़से कहती है कि यदि आवश्यकता पड़ी तो वह फिर से यही कर सकती है किंतु इस बार पैसे लेकर नहीं। वहीं पीटर सिलविया-जॉन को अनुबंध से 10,000 पाउंड ज्यादा देता है यह कह कर कि उनको इसकी ज़रूरत पड़ सकती है। इससे यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि मानवता का त्वचा के रंग से कोई सम्बंध नहीं होता है। आठवीं कहानी 'वह और वे' यू.के. के एक ऐसे, कभी विवाहित, दम्पति की एवं उनकी बेटी ज़ारा के विभिन्न पक्षों को उभारती है जिसमें यह दिखाया गया है कि कलापक्ष का प्रभाव इंसान और समाज पर स्थाई होता है जिसके कारण कलह होते रहते हैं। इन दोनों ने शादी से पहले भी विवाह के उतार-चढ़ाव, सुख-दुःख, प्रेम-घृणा एवं अच्छे-बुरे दिन देख लेने के बावजूद इस रिश्ते को समाज के जाने-माने लोगों के सामने स्वीकारा था किंतु फिर भी 3-4 साल के अंदर ही तलाक हुआ और झगड़ों कीझड़ी लग जाती है। कहानी की नायिका सोनम यह सोच बैठती है कि सारा तंत उसके विरुद्ध है क्योंकि वह एक अकेली औरत सबसे जूझ रही है। ऐसे किस्से आज के विगलित समाज में हमारे चारों ओर बिखरे पड़े होने के बावजूद भी यह कुछ नए प्रश्न उठाती है। 'नो सच शादी प्लीज़' दो ऐसे व्यावसायिकों की कहानी है जो सिंगापुर एवं यू.के. में स्थाई रूप से रचे-बसे हैं और अपने-अपने शोध प्रपत्र पाठन के समय अमेरिका में मिलते हैं। दोनों के बीच निजी आवश्यकताओं, रसायनों एवं कार्य प्रणालियों के कारण एक आकर्षक चुम्बकीय क्षेत्र पनपता है जिसके कारण वे वैवाहिक बंधन में बंधने को तैयार तो हो जाते हैं। किंतु दोनों परिवारों के बीच पसरी सांस्कृतिक असमानता अड़चन बनने लगती है। कहानी की नायिका साधना के मित्रों के सही और संवेदनशील सुझावों के कारण एक संतुलित हल निकल आता है। शादी तो होना निश्चित हो जाता है किंतु लगभग सभी यह कहते पाए जाते हैं कि 'नो सच शादी प्लीज़'।

'पापायन का दर्द' एक रसायन शास्त्र एवं कम्प्यूटर मॉडेलिंग विशेषज्ञ चंद्रा की दर्द भरी कहानी है जिसको उन्हीं फलों को छोड़ना पड़ जाता है जिसने उसके जीवन को संवारा एवं निखारा और जो उसको बहुत प्रिय भी थे। उसके यू.के. से सिंगापुर जाने के पीछे ये फल भी एक कारण थे क्योंकि जो वहाँ आसानी से कम कीमत पर सुलभ हो जाते हैं। कुछ यातनाओं के बाद विलोपन क्रिया द्वारा उसको पता लगता है कि वह इन फलों, कीवी, पपीता, पाइनएपल आदि में पाए जाने वाले पदार्थ ऐक्टीनिडिन का प्रत्यूर्जित (एलर्जिक) हो गया है और यहीं से उसकी दर्द भरी कहानी की शुरुआत होती है।

संग्रह की अंतिम दोनों कहानियों का परिवेश इतना लचीला है कि वह विश्व के किसी कोने के लोगों को अपनी नायिका-नायक बना सकता है। दोनों ही मर्मस्पर्शी एवं भावना प्रधान हैं। 'गाँठ लगी टाई' में इसकी नायिका ड्राईक्लीनिंग देते समय दिए गए कपड़ों में एक ऐसी टाई भी देती है जिसमें उसके दिवंगत पति के हाथों लगाई गई गाँठ लगी टाई भी होती है और यह हिदायत दे कर ही टाई देती है कि यह गाँठ न खोली जाय क्योंकि इसके माध्यम से वह अपने पति के साथ होने का एहसास करती थी। 'हूबी की नायिका के बारे अंत तक यह पता नहीं लग पाता है कि वास्तव में इसकी नायिका एक भैरव वाहिनी शवानी है जिसने विराज-नीलिमा के घर में पांव रखते ही उनके प्रारब्ध को बदलना शुरू कर दिया था। यह कहानी परोक्ष में यह भी स्थापित करने का प्रयास है कि अनेकानेक कारणोंवश विशुद्ध आत्मा का निवास किसी भी चेतन योनि में हो सकता है और जहाँ भी ऐसी आत्मा बसती है वह अपने आसपास केवल आनन्द ही आनन्द भर देती है जैसे कि श्रीराम जी के प्रिय भक्त काक भुसुडिं जी, जिनसे हंस का शरीर रख कर भोलेनाथ पार्वतीपति शिव जी ने सुमेरु पर्वत पर स्थित एक बटवृक्ष के नीचे मणियों से सुशोभित सीढ़ियों वाले सरोवर में, हंस रूप में, निवास करते हुए रामकथा सुनी थी।

ऐसी 12 कहानियों वाले अपने इस तीसरे कहानी संग्रह को कथा संसार में लाते हुए मुझे परम संतोष एवं हर्ष हो रहा है कि परमात्मा के प्रसाद से सुधी पाठको के स्नेह का मैं पात्र बन इसे आप सबको समर्पित कर पा रहा हूँ। इनमें से अधिकतर कहानियों को मेरी पत्नी ने श्रीमती चित्र कुमार जी ने समय-समय पर सुधारा है। उनको धन्यवाद देना मेरी क्षमता से परे है। पुत्रीवत डॉ. वंदना मुकेश शर्मा ने भी अनेक भाषाई सुधार किए हैं। मैं उनको हृदय से आशीर्वाद देते हुए गीतांजलि समुदाय के सभी वर्तमान एवं पूर्व में रहे सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिनकी जिजीविषा से पीरपूरित ऊर्जामयी मशाल मेरा मार्ग सुगम बनाती रही है। आधारशिला प्रकाशन के डॉ. दिवाकर भट्ट को धन्यवाद देते एवं स्वर्गीय लक्ष्मीमल्ल सिंघवी, श्रीमती

कमला सिंघवी एवं अनुजवत स्वर्गीय प्रो.कृष्ण दत्त पालीवाल जी को याद करते हुए इस संग्रह को मैं विवेकी आलोचकों एवं अपने पाठकों के हाथों में समर्पित करता हूँ।

डॉ. कृष्ण कुमार
21 बिडफॅर्ड ड्राइव, सेलीओक,
बर्मिंघम बी 29 6क्यू.जी.
E-mail:profdrkrishna@gmail.com

nk 'kCn

एक सजग कथाकार की यात्रा में उसकी मुठभेड़ सबसे पहले उसके परिवेश से होती है। परिवेश की विविधताएं और असंगतियां उसके लिए कथा भूमि तैयार करती हैं। श्री कृष्णकुमार की इन कहानियों को पढ़ते हुए मुझे लगा कि विदेशों में रहने वाला उने मन में एक विचित्र प्रकार का द्वन्द्व है। अपने मानसिक संस्कारों के स्तर पर वे भारतीय हैं जबकि उन्हें एक ऐसे परिवेश का मुकाबला करना पड़ता है जो उनके भारतीय संस्कारों से भिन्न है। यह प्रसन्नता की बात है कि वे इस द्वन्द्व को पूरे रचनात्मक कौशल से सम्हालते हैं। 'यह कैसी सम्भावना' शीर्षक कहानी में वे कहते हैं, 'उद्यान के फल-फूलों के रंग, स्वाद एवं सम्मोहकता में प्राप्त भिन्नता की तरह विश्व में जगह की पहचान, मान्यताओं एवं स्थानीय संस्कृतियों में भी अन्तर पाया जाता है, जो कभी-कभी तर्क के मापदण्ड पर सही उतरते नज़र नहीं आते।' (पृ. 15) उनका यह कथन स्त्री-पुरुष के बीच प्रचलित सम्बन्धों के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। यदि किसी देश में यह परम्परा है कि वही स्त्री विवाह के योग्य समझी जाती है जिसमें गर्भधारण कर बच्चे को जन्म देने की क्षमता होती है, तो इसका अर्थ यह नहीं हो जाता कि वहाँ पुरुष को अनेक स्त्रियों से सैक्स सम्बन्ध बनाने की छूट मिल जाती है। विराट और जैनीफर के सम्बन्धों के माध्यम से कृष्ण कुमार बड़ी कुशलता से स्त्री की गरिमा की रक्षाकर पुरुष को भी इस दायित्व वहन में बराबर का भागीदार सिद्ध करते हैं। वे इस झूठी धारणा को भी चुनौती देते हैं कि गर्भ न धारण कर पाने की स्थिति में सारा दोष स्त्री का ही होता है।

यह देखकर सुखद आश्चर्य होता है कि कृष्ण कुमार अपनी आकार में छोटी, कहानियों में मनुष्यता के बड़े सवालों को उठाते हैं। 'समय का नासूर' कहानी में वे नस्ल भेद और रंग भेद की समस्या को, एक विद्यालय की प्रतिष्ठा को बचाने के लिए झूठी रिपोर्ट तैयार कर एक अपराधी को दोषमुक्त करने की कोशिश से, प्रस्तुत किया गया है। इसी रंगभेद के शिकार अमर की मनःस्थिति इतिहास के पृष्ठों को खंगालने लगती है। वह सोचता है, यदि वह श्वेत त्वचाधारी होता तब भी क्या स्कूल यही करता? सम्भवतः नहीं। गांधी और मार्टिन लूथर किंग आदि के साथ भी तो रंग के कारण अत्याचार हुए थे। (पृ. 25) कहानीकार की यह चिन्ता वाजिब है कि

आदिकाल से चली आ रही यह समस्या समाप्त होने का नाम क्यों नहीं ले रही है?

कृष्णकुमार की 'जीवन चक्र' कहानी मानव संस्कृति की एकता को प्रभावित करने का सार्थक प्रयास करती है। 'पुनर्जन्म' में तथा 'कर्मफल' के परिणाम में विश्वास किसी विशेष संस्कृति का मान्यता न होकर सत्य की मानवसंस्कृति की मान्यता रही है। लगभग ऐसी ही भावभूमि को लेखक फंतासी के माध्यम से 'मैं तुम्हें छूना चाहता हूँ' कहानी में अभिव्यक्ति देता है। लेखक मानव मनोविज्ञान के प्रयोग के माध्यम से मानव चरित्रों और जीवन स्थितियों को रूपायित करता है। इससे यह अपनी कहानियों को विश्वसनीयता प्रदान करता है। 'जूते की वापसी' 'डूबी' 'वह कैसा लेना-देना', 'गांठ लगी टाई' आदि कहानियों में लेखक का यह कौशल आसानी से महसूस किया जा सकता है।

इस संकलन की कहानियों से गुजरते हुए पाठक को बराबर यह अहसास होता रहता है कि सब भारतीय मानसिकता से लबरेज लेखक, विदेशी परिवेश को शब्द दे रहा है। लेकिन ये कहानियाँ मानवीय मूल्यों की स्थापना का प्रयास करती रहती हैं, इसका कारण यह हो सकता है कि लेखक की चिन्ता का केन्द्र 'मनुष्य की पीड़ा' है और यह पीड़ा सार्वभौतिक और सार्वकालिक है। मानवीय संवेदना को रंग, नस्ल या राष्ट्र के भेदों में विभाजित कर नहीं समझा जा सकता। लेखक की रचना-दृष्टि एक व्यापक मूल्य बोध और जीवन बोध को वहन इन कहानियों को पठनीय बनाती है। भाषा प्रवाह पर लेखक का अद्‌भुत अधिकार है। भारतीय पाठक के लिए अजनबी स्थितियों को एक सहज और सरल अंदाज में प्रस्तुत करना लेखक की बहुत बड़ी सफलता है।

इन कहानियों के लिए लेखक को हार्दिक बधाई। आशा है वे अपनी रचनात्मकता को निरंतर प्रवाहमान रखेंगे और आगे भी सशक्त कहानियां देते रहेंगे।

हेतु भारद्वाज
प्रधान सम्पादक 'अक्सर'
ए-243 त्रिवेणी नगर, गोपालपुरा बाईपास
जयपुर-302018
फोन- 09414752039

अनुक्रम

01 .	यह कैसी मान्यता	19
02 .	समय का नासूर	26
03 .	जीवन चक्र	32
04 .	जूते की वापसी	36
05 .	तुम्हे छूना चाहता हूँ	41
06 .	छत्तीस दिन का घर	46
07 .	यह कैसा लेना देना	53
08 .	वह और वे	62
09 .	नो सचशा दी प्लीज़	70
10 .	पापायन का दर्द	80
11 .	गाँठ लगी टाई	85
12 .	हूबी	90

;g dlh ekU;rk\

ठहाकों के स्पंदन से कमरे की दीवारें संदोलित तथा कुछ पुरुषों की भावनाएं उत्तेजित हो रही थीं। वास्तव में बात भी कुछ ऐसी ही थी। अपनी साधारण सी बात सहज ढंग से कहने के बाद रिचर्ड जैसा पहले था वैसा ही रहा। उसको इसका लेशमात्र एहसास नहीं था कि अन्य लोगों के लिए उसके द्वारा कही हुई बात कितनी अजूबा थी क्योंकि वह तो इस सबका बचपन से ही अभ्यस्त था। अन्य लोगों के साथ रिचर्ड भी अपनी सम्भावित पत्नी जेनीफर के साथ उसी कमरे में बैठा था। वास्तव में ये दोनों घाना की राजधानी अंकरा से पांच वर्ष पूर्व लंदन आकर बस गए थे। दोनों लगभग 30 वर्ष के रहे होंगे। ब्रिटिश नागरिक तो वे पहले से ही थे। पांच वर्षों के अथक परिश्रम एवं प्रयास के बाद भी जेनीफर की गोद खाली ही रही जिसके कारण वह कुछ चिंतित रहने लगी थी। जेनीफर की चिंता, माँ बनने की इच्छा रखने वाली, अन्य महिलाओं से कई गुना ज्यादा थी क्योंकि वह जानती थी कि इसी के साथ जुड़ा था उसका भविष्य एवं दाम्पत्य जीवन। कमरे में ठहाका लगने का कारण था रिचर्ड का कथनः

''घाना में किसी चीज को स्वीकार करने से पहले यह देखा और परखा जाता है कि अमुक वस्तु ने अपनी गुणवत्ता-उपयोगिता एवं उत्पादकता को स्थापित किया है या नहीं। इसी कारण घाना में नई वस्तुओं की अपेक्षा कुछ पुरानी चीजों को अधिक प्रथमिकता दी जाती है। यही बात महिलाओं के चयन के समय भी देखी जाती है कि उसने यह सिद्ध किया है कि वह गर्भधारण कर बच्चे को जन्म दे सकती है या नहीं। जबतक यह स्थापित नहीं हो जाता किसी महिला की किसी की पत्नी बनने की सम्भावना कम होती है।'' कुछ पुरुषों के उन्मादित होने का यही कारण था कि घाना के लोग कितने भाग्यशाली हैं कि उनको अनेकानेक फलों को चखने का कानूनन अवसर मिलता है बिना किसी जिम्मेवारी के भार को वहन किए। उद्यान में फल-फूलों के रंग, स्वाद एवं सम्मोहकता में प्राप्त भिन्नता की तरह विश्व में जगह की पहचान, मान्यताओं एवं स्थानीय संस्कृतियों में भी अंतर पाया जाता हैं जो कभी-कभी तर्क के मापदंड पर सही उतरते नजर नहीं आते।

कमरे में बैठे लोगों के बीच एक प्रकार की औनपचारिक गोष्ठी शुरू हो गई।

लगभग सबका यही कहना था कि घाना में प्रचलित यह मान्यता दोषमुक्त नहीं है क्योंकि बच्चे के जन्म के लिए पुरुष उतना ही उत्तरदायी है जितना कि महिला तो फिर महिला पर ही यह बंधन और प्रतिबंध क्यों? महिलाओं को भी इसी प्रकार के अधिकार मिलने चाहिए या फिर सरकार की ओर से कुछ कानून बनने चाहिए ताकि पुरुषवर्ग मनमानी न कर सके। सरकार को ऐसी सुविधा स्थापित करनी चाहिए जिससे यह पता लग सके कि प्रजनन में क्या और कहाँ परेशानी है। रिचर्ड इन बातों को बड़ी ध्यान से सुनता-गुनता रहा। कमरे में बैठे डॉ. विराट ने रिचर्ड से पूछाः

''क्या आपने यह जानने का प्रयास किया कि जेनीफर अब तक गर्भवती क्यों नहीं हो पाई? दोनों में दोष किसी का हो सकता है। हो सकता है कि किसी स्वास्थ्य या मानसिक परेशानी के कारण जेनीफर माँ नहीं बन पा रही है। और यह भी हो सकता है कि रिचर्ड आपके शुक्राणुओं में किसी प्रकार का विकार हो। क्या किसी प्रजनन सलाहकार या अपने जी.पी. से इस बारे में बात की है?'' एक स्वर में दोनों ने कहाः

''नहीं, हमने तो इस बारे में सोचा भी नहीं। लेकिन अब जी.पी. से बात कर जानने का प्रयास करते हैं कि दोष कहाँ और किसमें है। धन्यवाद सुझाव के लिए।'' इस पर विराट ने रिचर्ड से फिर पूछाः

''कहीं आप सिगरेट तो नहीं पीते हैं और अगर हाँ तो कितनी सिगरेट रोज पी लेते हैं?''

''यही कोई 15-20 सिगरेट रोज।''

''यह एक कारण हो सकता है जिसकी वजह से जेनीफर गर्भधारण नहीं कर पा रही है क्योंकि यह माना जाता है कि ऐसा करने से शुक्राणुओं की संख्या एवं उनकी गुणवत्ता पर इसका बुरा असर पड़ता है। हो सके तो आप सिगरेट छोड़ कर प्रयास करें।''

जेनीफर का चेहरा दमकने लगा और वह बड़े ही प्रश्नवाचक ढंग से रिचर्ड की ओर देखने लगी। रिचर्ड ने विराट को धन्यवाद देते हुए पूछाः

''डॉ. विराट और कोई सुझाव?'' इस पर विराट ने कहाः

''तब तो आपको राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा (एन.एच.एस.) द्वारा दी जाने वाली प्रजनन सम्बंधी सुविधाओं और सेवाओं का भी ज्ञान नहीं होगा।''

''आप ठीक समझ रहे हैं। क्या आप हमको समझाने का कष्ट उठा सकते हैं?''

''यह विषय तो बहुत विशाल है किंतु बहुत संक्षेप में मैं आपको आवश्यक सूचना देने का प्रयास कर सकता हूँ। हो सकता है इससे आपको कुछ सहायता मिल जाय। 2 सितम्बर 1945 में द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने से पहले यू.के. में यहाँ

के नागरिकों के लिए स्वास्थ्य सुविधाएं निःशुल्क नहीं थीं। किंतु युद्ध के कारण हुई बरबादी के बाद लेबर सरकार ने निर्णय लिया कि देश में सबको समान एवं निःशुल्क स्वास्थ्य सुविधाएं मिलनी चाहिए। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए 5 जुलाई 1948 को तत्कालीन स्वास्थ्य मंत्री एन्यूरिन बेवन ने मैनचेस्टर में 'पार्क हास्पिटल' का उद्घाटन कर एन.एच.एस. की घोषणा कर दी। इसके अंतर्गत स्वास्थ्य सेवा का उपयोग करने में सबको समान अधिकार मिले हैं। अपने जी.पी. के माध्यम से इस सेवा का लाभ उठा कर आप शीघ्र ही खुशियाँ प्राप्त कर सकते हैं।''

लोगों की बातों एवं विराट के सुझावों को सुनते-सुनते जेनीफर इतनी भावुक हो चुकी थी कि उसने उठकर सबके सामने रिचर्ड का बड़े ही आत्मीय ढंग से आलिंगन करते हुए कहाः

''मैं तो सदैव यही सोचती रही कि यदि कोई स्त्री गर्भधारण करने में सफल नहीं होती है तो इसमें उसके सहयोगी का कोई दोष नहीं होता और सम्भवतः इसी के आधार पर घाना में यह मान्यता बनी है। मैं सोचती रही हूँ कि ऐसी स्त्रियों की धरती बंजर होती है जहाँ कुछ पनपने की सम्भावना ही नहीं हो सकती है। मैं सोचती रही हूँ कि ऐसी स्त्रियों की कोख एक पत्थर की शिला के समान होती है जिस पर कुछ भी उगाया नहीं जा सकता। किंतु वास्तविकता का आभास तो आज हुआ है। इस बारे में घाना में जागरूकता लाने के लिए मैं कुछ काम करूंगी ताकि ऐसी असामान्य एवं निर्दयी मान्यताओं का अंत हो।'' सबने कर्तल ध्वनि से जेनीफर की बातों का स्वागत किया। यह सब सुनने के बाद रिचर्ड ने कहाः

''मैं भी जेनीफर के साथ इस अभियान में जुड़ जाऊंगा। वैचारिक परिवर्तन तो अपने देश में लाना ही होगा।''

कमरे का गैस हीटर पूरे जोर पर था तथा सेंट्रल हीटिंग भी चल रही थी। वैचारिक एवं भौतिक ऊष्मा के बीच कमरे में बैठे सभी लोग अपने-अपने ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर स्थिति का आकलन कर रहे थे। सब यह लगभग भूल चुके थे कि ये जाड़े के दिन हैं तथा मौसम का मिजाज अकृपालु हो सकता है। कमरे का पर्दा हटा कर पंकज ने, जिसके घर यह पार्टी चल रही थी, बाहर की ओर देखा तो सड़क स्नो की सफेद चादर से ढक चुकी थी। सड़क पर खड़ी सभी कारों के शीशों पर स्नो इस प्रकार चिपकी थी जैसे एक भयभीत बच्चा माँ से चिपक जाता है। एक-एक करके सब खड़े होते गए बाहर का नजारा देखने के लिए। रात के 12 बज चुके थे। इतने में भावना सबके लिए चाय लेकर आ गई। चाय का आनन्द ले भावना को धन्यवाद दे, सुंदर-स्वादिष्ट भोजन एवं आवभगत के लिए, लोग एक-एक करके जाने लगे। रिचर्ड-जेनीफर रुक गए, भावना की मदद करने के लिए ताकि किचेन

की सफाई आदि ठीक से हो जाय। जेनीफर एवं भावना काम में लग गए। जेनीफर बर्तनों को साफ कर निर्धारित जगहों पर रखती गई और भावना बचे हुए भोजन को डिब्बों एवं पॉलीथिन में रख कर फ्रीजर में डालती गई। पंकज एवं रिचर्ड फिर बातों में उलझ गए। भावना ने जेनीफर को गले लगाते हुए कहाः

''आशा है जो बातें आज इस घर में हुईं उनसे आपको कोई मानसिक चोट नहीं लगी। अगर ऐसा हुआ है तो मैं क्षमा प्रार्थी हूँ।''

''नहीं, बहन। आज की संध्या ने तो हमारा जीवन ही बदल दिया। जीवन में जो निराशा पसर रही थी, आशा जो छूट रही थी, उसको दूर करने का बल मिला है। कई नए रास्ते खुले हैं। आपके घर आए सभी लोग सुविचार रखते हुए बड़े ही संवेदनशील थे। धन्यवाद हम दोनों को भी बुलाने के लिए।''

''देखो जेनीफर, अब मैं आपको निहायत व्यक्तिगत बात बताती हूँ। आप दोनों की तरह पंकज-मैं कई वर्षों तक इसी प्रकार परेशान रहे हैं। जब डॉक्टर के पास गए तब पता लगा कि पंकज की शुक्राणु गणना (स्पर्म काउंट) बहुत कम थी और इसी कारण मैं गर्भधारण नहीं कर पा रही थी। हम दोनों एक गर्भधारण चिकित्सालय (फर्टिलिटी क्लीनिक) में गए और आई.वी.एफ. तकनीक द्वारा हम दोनों का उपचार हुआ। हमारे दोनों बच्चे इसी प्रक्रिया के प्रतिफल हैं। मैं आपको इस चिकित्सालय का पता देते हुए उस डॉक्टर का परिचय भी दे दूंगी जिसने हम दोनों को खुशियाँ दीं। चाहो तो रिचर्ड से बात कर आप भी इस राह पर चल सकती हैं। हम ने तो हजारों पाउंड खर्च किए किंतु हो सकता है आपको यह सब निःशुल्क एन.एच.एस. के माध्यम से मिल जाय। समाज और सरकार की सोच में आमूल परिवर्तन, समय के साथ, आया है।'' जेनीफर को कार्ड देते हुए भावना ने फिर कहाः

''जेनीफर, अगर इस प्रक्रिया में पहली या दूसरी बार सफलता न मिले या गर्भपात हो जाय तो घबराना नहीं। ऐसा हो जाना सामान्य है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था।''

घर की सफाई पूरी कर, क्लीनिक का कार्ड लेकर, पंकज-भावना को धन्यवाद देते हुए रात के लगभग एक बजे रिचर्ड-जेनीफर अपनी जर्मन कार 'पसाट' में चले गए। किंतु कार चलाने से पहले उनको स्नो स्क्रैपर से कार के शीशों को साफ करना पड़ा था। ऐसा करने के साथ उनको डीआइसर का स्प्रे भी करना पड़ा था। घर पहुंचते ही रिचर्ड ने जेनीफर से कहा :

''जिंदगी की आखिरी सिगरेट को सुलगा कर तुम मुझे दो जिसको मैं डॉ. विराट की याद में पीना चाहता हूँ जिसने हमको सुनहरे भविष्य का मार्ग दिखाया है। लाओ सिगरेट की सारी डिब्बियों को मैं उनको अभी बाहर गार्डेन में एक गहरा गड्ढा खोद

कर दफना देता हूँ। मैंने प्रण कर लिया है कि अब सिगरेट नहीं पिऊंगा। पैसों एवं भविष्य दोनों की बरबादी इसके कारण हो रही है। जेनीफर, तुमने भी मुझे कभी रोका नहीं। मैं तुम्हारे खातिर सिगरेट तो छोड़ ही सकता था।'' इस पर जेनीफर ने कहाः

''मैं चाहती तो बहुत थी कि तुम यह लत छोड़ दो किंतु...। तुम्हारे शरीर एवं कपड़ों से सिगरेट की अजीब तरह की दुर्गंध आती रहती है जिसके कारण रात में मैं कभी भी सहज नहीं हो पाती हूँ। किंतु मैंने यह सोच कर कभी मना नहीं किया कि शायद इसी के सहारे तुम अपना दुःख एवं गम कम कर लेते हो। अब चूंकि निर्णय आपने किया है, मैं बेहद प्रसन्न हूँ। देखना अब सब ठीक हो जाएगा, ऐसा मेरा मन कहता है। चलिए कल ही जी.पी. से मुलाकात कर सारी बातें कर लेते हैं।''

''नहीं जेनीफर! अभी नहीं। पहले सिगरेट बंद करके देखते हैं। हो सकता है जैसा कि डॉ. विराट ने कहा है इससे ही हमारी समस्या का समाधान मिल जाय।''

''लेकिन हर्ज ही क्या है जी.पी. से सलाह लेने में? इसमें कुछ खर्च तो होना नहीं। सब निःशुल्क। घाना में होते तो बात और होती।''

''चलो जैसी तुम्हारी इच्छा। तुम्हारे तर्क हमेशा अकाट्य रहते हैं। आखिरी सिगरेट तो लेकर आओ। सिगरेट पीने के बाद मैं सोने के लिए जाता हूँ। एक कप ब्लैक कॉफी का भी लेते आना।''

नई सुबह उन दोनों की नूतन उमंगों से प्रारम्भ हुई। बाहर मनहूस स्नो बिखरी होने के बावजूद भी उन दोनों को मौसम खुशनुमा लग रहा था। सड़क पर बच्चे स्कूल जाते नजर आ रहे थे और लोग अपने-अपने कामों पर। रिचर्ड ने, संयोगवश, एकदिन की छुट्टी ले रखी थी अपनी कार ठीक कराने के लिए। जेनीफर तो सुबह 6 बजे ही उठकर चली गई थी क्योंकि वह एक फैक्ट्री में क्लीनर की तरह काम करती थी।

रिचर्ड-जेनीफर को जी.पी. की सर्जरी में उसी दिन शाम 06.30 बजे का समय मिल गया। डॉ. विलियम जोंस, योग्य एवं संवेदनशील, ने दोनों की बातें बड़े ध्यान से सुनीं और बाद में समझायाः

''घबराने की कोई जरूरत नहीं है। रिचर्ड तुमने सिगरेट छोड़ कर सबसे सुंदर कदम इस दिशा में उठाया है। हो सकता है तुम दोनों को आई.वी.एफ. उपचार की आवश्यकता ही न पड़े। मैं तुम्हारा नाम गर्भधारण चिकित्सा के लिए भेजे दे रहा हूँ। वहाँ से आपको शीघ्र ही पत्र आ जाएगा। सारे निरीक्षणों के बाद पता लग जाएगा कि क्या उपचार चाहिए एवं क्यों जेनीफर गर्भधारण नहीं कर पा रही है। तुम्हारा उपचार एन.एच.एस. के अन्तर्गत निःशुल्क ही होगा। मैं तुम दोनों के उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएं देता हूँ।''

डॉ. जोंस को धन्यवाद देते हुए दोनों प्रफुल्लित मन से घर पहुंच गए। डॉ.

विराट एवं भावना को फोन कर हृदय की अतल गहराइयों से दोनों के प्रति आभार व्यक्त किया।

पंकज-भावना के घर बिताई एक संध्या ने रिचर्ड-जेनीफर की सोच एवं जीवन जीने के नजरिये को बदल दिया। जेनीफर के चेहरे पर पुरानी चमक वापस आई तो रिचर्ड के मन-मानस में आत्मविश्वास भरने लगा। दोनों अब अपने भविष्य के बारे में अधिक आश्वस्त हो रहे थे। जेनीफर के जीवन में आशा की किरणें दमकने लगीं। उसको हर ओर खुशियाँ ही खुशियाँ दिखने लगीं। वह अपने आपको माँ के रूप में ढालते हुए यदा-कदा नाभी के चारो ओर दोनों हाथों से वृत्ताकार तरीके से पेट को सहलाया करती। रिचर्ड को उसने मात्र एक सहयोगी ही नहीं वरन् पति के रूप में देखना प्रारम्भ कर दिया था। कभी-कभी वह अनायास सोचने को विवश हो जाती कि अगर भावना ने उनको दावत न दी होती तो..., अगर दावत स्वीकार करने के बाद भी वे न जा पाते तो..., डॉ. विराट वहाँ न आया होता तो... आदि-आदि। ऐसे पलों में वह ऊहापोह के दलदल में फंसती ही जाती रही। इन सबके बावजूद जेनीफर एक पक्षी की तरह मुक्त हो रही थी। जीवन के तिमिरमय गलियारे अब प्रकाशित होने लगे थे।

डॉ. जोंस के पत्र ने जादुई काम किया। निरीक्षणों के बाद यह स्थापित हो गया कि परेशानी कहाँ, किसको और क्या है। रिचर्ड को फर्टिलोविट एम.टी. जैसी कुछ औषधियाँ दी गईं और जेनीफर को सलाह कि वह भारी काम न किया करे। दोनों को यह सलाह मिली कि वे मानसिक तनाव को भी कम करने का प्रयास करते हुए प्रसन्न रहें। सलाह मिलने के दो माह बाद जेनीफर ने नौकरी छोड़ दी और घर पर ही रहते हुए बच्चों के कपड़े सिल कर कुछ आमदनी करने लगी। डॉ. विराट एवं भावना से सम्बंध बनाए रखा।

स्थापित मान्यताओं के बंधन को तोड़ते हुए रिचर्ड ने जेनीफर से विवाह करने का निश्चय कर लिया। जेनीफर को लगा जैसे उसे तीनों लोकों की रानी बना दिया गया हो। रिचर्ड से वह बार-बार पूछती रहतीः

''क्या वास्तव में यह निर्णय तुम्हारा ही है? मैंने तो अब तक यह सिद्ध नहीं किया है कि मैं गर्भधारण कर सकती हूँ। चाहो तो मान्यता के अनुसार चल सकते हो। मुझे कोई आपत्ति न होगी। रिचर्ड तुम वही करना जिसका निर्वाह मन से कर सको।'' रिचर्ड ने बिना कुछ कहे शादी का कार्ड लाकर जेनीफर को दे दिया। दो सप्ताह बाद स्थानीय चर्च में विवाह निर्धारित था। रिचर्ड ने जेनीफर को यह तोहफा देने के लिए सारी तैयारी गुप्त रखी थी। बड़े ही धूमधाम से दोनों की शादी हो गई। डॉ.विराट एवं भावना ने रिचर्ड से कहाः

''अब शीघ्र ही तैयार हो जाओ दूसरी बड़ी पार्टी के लिए। जेनीफर ने भी कुछ गुप्त रखा है किंतु आज सब स्पष्ट होने जा रहा है। 5 महीनों में तुम बाप बनने वाले हो।'' रिचर्ड ने जेनीफर को धरती से ऊपर उठाने का प्रयास किया तो भावना ने कहाः

''सम्भल कर। अब वह अकेली नहीं है। तुम्हारी संतान उसकी कोख में सांस ले रही है।''

।।

le; dk ukl j

अमर लंच टाइम में अन्य बच्चों के साथ बाहर खेल के मैदान में आ गया। बच्चे फुटबाल खेलने की तैयारी कर रहे थे। सामान्यतः अमर अपने आपको क्लास के बच्चों से अलग-थलग ही रखते हुए उनके क्रियाकलापों में साथ नहीं देता था। पूरा क्लास अमर के ऐसे व्यवहार से नाराज़ रहता था। बच्चों ने मिलकर शीघ्र ही योजना बना ली कि आज बदला लेते हुए अमर को खूब परेशान करेंगे। अमर के अन्तस्थल में द्वन्द्वों का तूफ़ान उमड़ रहा था। वह अन्दर ही अन्दर यह महसूस कर रहा था कि आज कुछ अप्रिय घटना घटने वाली है किन्तु वह अपने आप को रोक नहीं पाया।

अमर फुटबाल बूट पहन कर मैदान के बाहर खड़ा था। जब किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया तब वह स्वयं ही सबके बीच मैदान में आ गया। गिरोह के नेता गैरी ने कहा-

''हम तुमको टीम में नहीं रख सकते।''

''क्यों नहीं? मैं भी सबके साथ खेलना चाहता हूँ।''

''क्यों, आज क्या खास बात है? हमारी टीम में तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं। जाकर सर की चापलूसी करो और कुछ पढ़ो। वही तुम्हारे काम आएगा। ए लेवल की अंतिम परीक्षाएं होने ही वाली हैं।''

''कुछ ही महीनों में हम बिछुड़ जाएंगे। फिर पता नहीं कभी मिलें या नहीं। प्लीज लेट मी ज्वाइन इन।''

''ठीक है आओ। लेकिन तुमको सबके लिए सिगरेट खरीद कर खुद भी पीनी पड़ेगी। अगर मंजूर है तो आ जाओ।''

''सबके लिए सिगरेट खरीद तो सकता हूँ लेकिन मैं नहीं पी सकता।''

''चलो मानते हैं तुम्हारी शर्त। आओ मैदान में। आज सेन्टर फॉरवर्ड की जगह खाली है।''

''वेलकम अमर।'' कहकर सबने आवाज लगाई। शिकार उनकी गिरफ्त में आ चुका था।

थोड़ी देर तक सब कुछ सामान्य रहा और अमर गेंद के आगे-पीछे भागता रहा।

अमर को सब अच्छा लग रहा था। सी.सी.टी.वी. पर यह सब देख कर पी.ई. टीचर को आश्चर्य हुआ और वह मैदान में आ गया। साइड लाइन से खेल का नज़ारा देखता रहा। सबके बीच अमर को खेलते हुए देख उसे प्रसन्नता हो रही थी। अमर की बॉल सम्भालने की कुशलता को देख कर पी.ई. टीचर उसको स्कूल की फुटबाल टीम में रखने के बारे में सोचने लगा। अचानक, मौका पाकर, ग्रुप नेता गैरी ने बाल छीनने के बहाने अमर को धक्का देकर गिराया और दूसरे लड़के ने बाल की जगह उसके मुंह पर बूट दे मारा। कौन कब क्या करेगा यह सारी योजना गैरी ने पहले ही बना ली थी। तुरंत ही वहीं दो-तीन दांत टूट कर गिर गए और मुह से खून निकलने लगा। गर्दन हिलाने में भी तकलीफ थी। पी.ई. टीचर ने सीटी बजा कर खेल बंद किया। अमर को अस्पताल एक अध्यापक के साथ भेज दिया गया और सारी टीम को हेडमास्टर मिचेल के दफ्तर में जाकर बयान देना पड़ा। हेडमास्टर के अनेकानेक सवालों के बाद गैरी ने स्वीकार किया कि यह सब उसी का किया है।

एम.आर.आई. रिपोर्ट से पता लगा कि अमर की गर्दन की दो हड्डियों (सी3 और सी4) में झटका लगने के कारण वे अपने स्थान से खिसक कर नसों पर दबाव डाल रही थीं जिसकी वजह से हाथों में झुनझुनी थी। दांत और होठों की चोट तो साफ थी। चेहरा बुरी तरह से सूज चुका था। खबर मिलते ही अमर के माता-पिता अस्पताल पहुंचे और उनको जब सब पता लगा तो वे लाल-पीले हो रहे थे। उन्होंने बिना हेडमास्टर से बात किए पुलिस में रिपोर्ट लिखवा दी, जो नियमानुसार अस्पताल पहले ही कर चुका था। पुलिस ने हेडमास्टर मिचेल से रिपोर्ट चाही। पुलिस केस बन जाने की खबर मिलते ही मिस्टर मिचेल घबरा गए। शाम के छह बज चुके थे। स्कूल खाली हो चुका था। केवल कुछ स्टाफ के साथ मिस्टर मिचेल दिन के काम को पूरा करने में लगे थे। मिस्टर मिचेल ने सोचा कि अगर दूरदर्शिता एवं समझदारी से काम नहीं किया गया तो स्कूल की ख्याति बिगड़ जाएगी और यू.के. के सबसे बड़े स्कूल अपराधों (बुलींग) में उसके स्कूल का नाम भी शामिल हो जाएगा जिसके कारण उसके स्कूल की रेटिंग स्कूल की लीग टेबल में गिर सकती है। पी.ई. टीचर को फोन कर तुरंत अपने दफ्तर में बुलाया। बहुत देर तक आपस में मंत्रणा हुई। पी.ई. टीचर ने पहले तो हेडमास्टर के सुझाव पर अपनी असहमति व्यक्त की किंतु दबाव एवं प्रलोभन के आगे उसे झुकना पड़ा। उसने भी अन्य लोगों की तरह अपने विचारों के साथ समझौता कर लिया। व्यक्तिगत लाभ के लिए दोनों ने अपने-अपने नैतिक दायित्यों की बलि चढ़ा दी। पी.ई. टीचर ने आँखों देखे हादसे की रिपोर्ट में लिखाः

''फुटबाल का खेल अच्छा चल रहा था। बच्चे चारों ओर से बाल झपटने में

लगे थे। बाल अमर के कब्जे में थी। वह उसको लेकर आगे बढ़ता जा रहा था। अचानक ठोकर खाकर वह गिर गया जिसके कारण यह दुर्भाग्यपूर्ण घटना घटी। नजदीक से देखने पर पता लगा कि अमर के बूट के फीते खुले थे। और इसी कारण वह गिरा भी था। किसी अन्य बच्चे का इसमें कोई दोष नहीं।'' हेडमास्टर ने बच्चों की रिपोर्ट को चिन्दी-चिन्दी कर डस्टबिन में फेंक दिया। पी.ई. टीचर को मिस्टर मिचेल ने धन्यवाद दिया और कहा- ''थैंक यू फॉर सेविंग द स्कूल।''

अगले दिन स्कूल खुलते ही हेडमास्टर ने गैरी को अपने ऑफिस में बुला कर कहाः

''देखों, तुमने अपराध तो बहुत बड़ा किया है जिसके कारण तुमको स्कूल से बाहर निकाल देना चाहिए किंतु ऐसा करने से तुम्हारा सारा जीवन नष्ट हो सकता है।''

''सर, मुझे कोई परेशानी न होगी। मैं तो वैसे भी पढ़ना नहीं चाहता हूँ। समय से पहले मुझे वह करने का मौका मिल जाएगा जो मैं बाद में करना ही चाहता हूँ।''

''वह क्या?''

''घरों में चोरी और सड़कों पर छीना-झपटी आदि।''

''यह तो बहुत बुरा विचार है। क्या यही तुमने इस स्कूल में सीखा है। तुमको जेल हो सकती है।''

''सर, इसमें क्या नई बात है। मेरे डैड तो अब भी जेल में हैं ऐसे ही कामों के कारण। घर में वे सारी सुविधाएं हैं जो सामान्यतः आम लोगों के पास नहीं होतीं।''

''लेकिन गैरी, इसमें स्कूल की बड़ी बदनामी होगी। मैं सब कुछ ठीक करवा सकता हूँ।''

''वह कैसे? मैंने तो अपना अपराध स्वीकार किया है।''

''मैं तुमको निर्दोष सिद्ध करा सकता हूँ। तुमसे भी यदि कोई पूछे तो यही कहना कि अमर अपने आप गिरा था।''

''लेकिन सर यह तो सही नहीं है।''

''तुमको बचाने का और कोई रास्ता नहीं है। कल हो सकता है स्कूल में जांच-पड़ताल के लिए पुलिस कर्मचारी आएं। बोलो तुम क्या चाहते हो? जेल या आज़ादी।''

''सर! थैंक यू। मैं वैसा ही करूंगा जैसा आपने सुझाया है।''

सांस्कृतिक टकरावों से उत्पन्न घिनौने अपराध का एक दुखद नजारा सामने आया जिसमें नैतिक दायित्वों का गला घोटते हुए न्याय को जिंदा मार दिया। स्कूल की झूठी इज्जत की रक्षा के खातिर अमर के साथ घोर अन्याय हुआ, गैरी की पीठ

थपथपाई गई ताकि वह बड़ा होकर समाज के लिए समस्या बन बड़े-बड़े अपराधों को अंजाम दे सके।

सारी कागजी कार्यवाही पूरी हो गई। अमर को स्कूल से चेतावनी मिल गई और उसके चेहरे पर जिंदगी भर के लिए निशान रह गया। गर्दन की चोट को ठीक होने में महीनों लग गए। एक बार फिर वही हुआ जो ऐसी परिस्थितियों में जमाने से होता आया है। अपराध दफना दिया गया, अपराधी बच निकला और पीड़ित कराहता रहा। रंगभेद का नाटक फिर से खेला गया। समय-समाज का यह घिनौना दंश और अधिक ज़हरीला होता रहा। अमर सोचता रहा- 'यदि वह स्वेत त्वचाधारी होता तब भी क्या स्कूल यही करता? सम्भवतः नहीं। गांधी और मार्टिन लूथर किंग आदि के साथ भी तो रंग के कारण ही अत्याचार हुए थे। वैध टिकट होने के बावजूद भी गांधी को दक्षिण अफ्रीका में चलती ट्रेन से धक्का मार कर प्लेटफॉर्म पर बाहर फेंक दिया गया था।' यह सब सोच वह सिहरता रहा।

अमर के अन्तःस्तल में तूफान उमड़-घुमड़ रहा था। विचारों एवं सोच का यान उड़ान भरने को मजबूर हो चुका था। जिसके लिए न तो 'रनवे' की जरूरत थी न ईंधन या कंट्रोल टॉवर से उड़ान भरने की आज्ञा ही। वह सीधे इतिहास के पन्नों में डूबता हुआ उस स्थान एवं कालखंड में पहुंच गया जब-जहां आधुनिक यूरोप एवं एशिया के पूर्वज एक ही थे। साथ-साथ रहते हुए एक ही भाषा बोलते थे। रंगभेद के विचार और इससे जुड़ी मानसिकताएं कब, कहाँ और कैसे मानव मस्तिष्क में आई? अमर सोच-सोच कर थक चुका था। भ्रामरी प्राणायाम की तरह वह अंदर ही अंदर बड़बड़ाता रहा- 'इतिहास एवं इतिहासकारों के अनुसार यह माना जाता है कि भारतीय एवं यूरोपीय पूर्वजों के बीच घनिष्ठ सम्बंध थे, अगर वे एक ही नहीं थे। वे यायावर थे तथा पशुपालन करते हुए जीवन निर्वाह करते थे। ये यूक्रेन, दक्षिणी-पश्चिमी रूस तथा काज़िकस्तान के पहाड़ों की तराई में रहते थे तथा उनकी भाषा को पूर्ववर्ती भारतीय यूरोपियन नाम दिया गया था। इस स्थान पर एशिया एवं यूरोप की सीमाओं का मिलन होता है। अपने मवेशियों, भेडों, बकरियों एवं गायों को लेकर चारे की खोज में जगह-जगह घूमा करते थे और जहाँ उपयुक्त स्थान मिला, डेरा डाल दिया। किसी समय इनके दो समूह बन गए। क्यों दो समूह बने और क्यों बिखरे कुछ पता नहीं? एक पश्चिम की ओर होता हुआ यूरोप के विभिन्न स्थानों पर बस गया और ग्रीक, लैटिन, केल्टिक और ट्यूटानिक भाषाओं को जन्म दिया। दूसरा समूह पूर्व गया जहाँ तरह-तरह की बोलियों का जन्म हुआ। इनमें से एक थी आर्यभाषा। आर्यभाषी खीबा के उस प्रांत में ठहरे जो अपेक्षाकृत खुशहाल एवं उपजाऊ था। एशिया में खीबा को ही आर्यों का पुराना स्थान मानना चाहिए। कुछ समय खीबा में रुकने के बाद ये

उजबेकिस्तान और अफगानिस्तान के क्षेत्रों खोकन्द और बदख़्शाँ तक आए। यहाँ पर इन आर्यभाषियों के पुनः दो समूह बन गए। एक पशिचम की ओर ईरान पहुंच गया जहाँ पराजिक एवं मीडिक भाषाओं का जन्म हुआ। दूसरा समूह हिंदूकुश, काबुल की तराई होता हुआ भारत पहुंचा, इनकी भाषा आर्य ही रही। ध्यान रहे कि इन दोनों समूहों की भाषा खोकन्द और बदख़्शाँ में अलग होने से पहले एक ही थी।' जब श्वेत एवं अश्वेत त्वचाधारियों के पूर्वज एक ही थे तब यह भेदभाव क्यों और कैसा? अमर ने हार मान ली और आधुनिक, तथाकथित, सभ्य मानव के अनैतिक-अमानवीय विभाजन रेखा को स्वीकार कर लिया क्योंकि उसको रहना तो इन्ही के बीच था।

खेल के मैदान में खेले गए इस विनाशकारी नाटक के दो महानायकों, अमर-गैरी, के व्यक्तित्व पर इसका असर पड़ने लगा। अमर अन्तरर्मुखी होता गया और गैरी इसके विपरीत। अमर समय-समाज-संसार के बारे में सोचने लगा तो गैरी हेडमास्टर मिचेल के काम करने के ढंग के बारे में सोच-सोच कर इस निष्कर्ष पहुंच गया कि सही-गलत, अच्छा-बुरा, न्याय-अन्याय और धर्म-अधर्म सब हमारे द्वारा बनाए मापदंडों के अनुसार नापे एवं देखे जाते हैं। इन विचारों की पुष्टि के लिए उसने सबसे पहले अपने घर में ही चोरी की। माँ के पर्स से 20 पाउंड का एक नोट निकाल लिया। पूछे जाने पर साफ मना कर दिया कि उसको कुछ पता नहीं। माँ थी, मान गई। विश्वास कर लिया। स्वयं अपने आप को दोषी ठहरा लिया। गैरी का हौसला बढ़ा और उसने एक गिरोह बनाने की ठान ली। गिरोह के मुखिया गैरी ने अपने जान-पहचान के घरों में मौका देख कर चोरी करवाना शुरू किया। धंधा चल निकला। सबके पास अच्छ-अच्छे नए फोन, लैपटॉप एवं अन्य आकर्षण के सामान होते गए। गैरी ने एक कार भी खरीद ली और स्कूल जाना बंद कर दिया। हर तरफ चोरी-छीना झपटी आदि के बारे में अमर बराबर सोचता रहता। एक समय था जब लोग अपने घरों को खुला छोड़ देते थे और चोरी आदि का भय किसी को नहीं था। और अब दिन में भी ताले टूट जाते हैं। अलार्म सिस्टम पर नियंत्रण कर लिया जाता है और अपने ही घरों में लोग असुरक्षित रहने लगे हैं।

प्रकृति-ब्रह्मा द्वारा विरचित इस ब्रह्मांड के असंख्य क्रिया-कलाप काल निर्धारित होते हैं। इनको बदल पाने की क्षमता देव-दानव-मानव के पास नहीं। इतिहास इस बात का साक्षी है एवं प्रमाण रहा है। भारतीय संस्कृति का यह मर्म अमर की दादी ने वैदिक ग्रंथों पर आधारित कहानियों के माध्यम से अमर के मस्तिष्क में डाल दिया था। समय-समाज-संसार की गतिविधियों को स्कूल में हुए हादसे एवं तत्जनित अन्याय से जोड़ते हुए इन्द्र के मानस पुत्र जयंत द्वारा किए एक अपराध के माध्यम से समझने का प्रयास किया। जयंत ने यह निशचय किया कि वह अयोध्यानंदन

श्रीराम के बल का परीक्षण करेगा। एक कौवे का शरीर रख कर वह वहाँ जाता है (किष्किंधा कांड, रामचरितमानस) जहाँ सुसज्जित जानकी जी श्रीराम जी के पास बैठी हैं। मर्यादित तुलसीदास जी ने लिखा है कि कौवे ने जानकी जी के चरणों में प्रणाम करते हुए अपनी चोंच से रक्त की धारा बहा दी। साधारणतया संयमित श्रीराम जी से यह देखा न गया और उन्होंने कुस का मंत्र संचालित तीर बना कर जयंत के पीछे छोड़ दिया। सबसे पहले वह अपने पिता इंद्र के पास गया। पिता ने राम के द्रोही को शरण नहीं दी। मतलब अपने बेटे के अपराध को क्षमा नहीं किया। इस प्रकार जयंत को तीनो लोकों में कहीं भी शरण नहीं मिली और वह अंत में नारद मुनि के पास पहुंचा। दयालु मुनि ने सुझाया कि केवल श्रीराम ही उसको क्षमा प्रदान कर जीवनदान दे सकते हैं। जयंत ने ऐसा ही कर अपना अपराध स्वीकार किया। श्रीराम ने उसकी एक आँख फोड़ कर उसे जिंदा छोड़ दिया।

अमर सोचता रहा कि त्रेतायुग एवं कलियुग के मानवीय विचारों में न्याय-अन्याय, धर्म-अधर्म एवं अपराध को नियंत्रित करने में कितना अंतर हो गया है। अन्यथा उसको दोषी ठहराते हुए गैरी को आजादी न मिलती। हर प्रकार के रोगों का उपचार हो जाता है किंतु वैचारिक प्रदूषण तो समाज एवं संसार का सत्यानाश कर ही समाप्त होता है। यह समय के साथ-साथ अंदर ही अंदर बढ़ता हुआ धीरे-धीरे रिसता है नासूर की तरह। इन विचारों ने अमर को राहत दी और वह भविष्य की आँखों में झांकने लगा।

I I

thou pØ

विक्टोरिया लारेंस भीषण सर दर्द के कारण काम पर न जा पाई। उसका फ्रेंच पति अपने दफ्तर के काम से नार्वे गया था। बच्चों की एक हफ्ते के लिये मिडटर्म की छुट्टी थी, अतः डेविड एवं गैरी दोनों घर पर ही थे। दोनों को अंग्रेजी एवं फ्रेंच पर पूरा अधिकार था। माँ को घर पर देखकर, दोनों बच्चे बड़े प्रसन्न थे। डेविड की आयु 9 एवं गैरी तो केवल 6 वर्ष का ही था। विक्टोरिया भी थोड़े समय के लिए प्रसन्न थी। दोनों बच्चे अन्य कुछ मित्रों के साथ अपने खेल में यह भूल गए कि उनकी माँ सर दर्द के कारण परेशान थी।

सारे बच्चे एक साथ मिलकर खूब उछल कूद एवं हल्ला-गुल्ला करते हुए खेल में व्यस्त हो गए। विक्टोरिया ने उन सबको कई बार मना किया कि वे शान्ति पूर्वक खेलें, किन्तु उन पर कोई असर नहीं हुआ। उनमें से एक ने तो यह भी कह दिया कि ''वी वुड प्ले लाईक दिस, दीज हॉली डेज़ हैव कम आफ्टर ए लॉंग वेट।'' विक्टोरिया झल्ला कर अपने कमरे में चली गई और दरवाजा बन्द कर खिड़की के पर्दो को खींच बिस्तर में लेट गई।

बिस्तर पर जाते ही विक्टोरिया की आँख लग गई और वह शीघ्र ही सपनों की दुनिया में खो गई। बचपन से ही विक्टोरिया को सपने बहुत आते थे। जिनके कारण कभी-कभी वह प्रातः को ही थकी-थकी लगती। इस बार उसके सपनों में उसकी माँ आई और कहा- 'देख विक्टोरिया बच्चे तो खेलते ही हैं और जब चार बच्चे साथ होते हैं तो वे एक बन्दर की सेना के समान हो जाते हैं। मैं भी तुझको इसी प्रकार टोका करती थी, जब मेरे सर में दर्द होता था। क्या तुझे याद नहीं एक बार मैंने क्या कहा था? विश्वास कर मैं तुमसे बदला लेने के लिए इन बच्चों के रूप में नही आई हूँ। मैं तो आज कल एक अपराध के जुर्म में जर्मनी के फ्रैंकफॅर्ट के जेल में पड़ी हूँ। पीटर नाम के एक पुरुष के रूप में।' इतने में एक बच्चे ने आकर दरवाजा खोल दिया और खाने के लिए कुछ माँगा। सपना टूट गया। वह हड़बड़ा कर उठी।

सपने में सुनी माँ की बातों से परेशान विक्टोरिया ने अपने आपको सम्भाला तथा बच्चों के लिए कुछ सैन्डविच, चिप्स एवं आरेंज ड्रिंक का प्रबन्ध किया। जल्दी-जल्दी अपना पेट भरने के बाद बच्चे फिर खेल में व्यस्त हो गए। गैरी ने आकर

माँ के गालों का चुम्बन कर, मूक शब्दों में अपना आभार प्रकट किया और भाग कर चला गया। विक्टोरिया का सर दर्द मानों थोड़ी देर के लिए गायब सा हो गया। वह उस सपने के बारे में सोचती रही जो उसने अभी-अभी देखा था। अचानक बिजली की तरह 40 वर्ष पूर्व की वह शाम याद आ ही गई जिसके बारे में माँ ने संकेत किया था।

अंधेरा होते-होते बच्चे अपने-अपने घरों को वापस चले गए। जाड़े के दिनों में इंग्लैंड में दोपहर के 3 बजे ही अंधेरा छा जाता है और एक अजीब प्रकार की मनहूसी फैलने लगती है। डेविड एवं गैरी आकर माँ की गोद में लेट गए और अपने मासूम ढंग से विक्टोरिया से क्षमा माँगने लगे। विक्टोरिया ने बड़े ही प्यार से दोनों बच्चों को गले लगाया और कहा- "तुम दोनों ने मिलकर आज मुझे बहुत सताया है। तुम्हारे अन्य मित्रों के सामने मैं तुमको डांट भी नही सकती थी। मैं आज इतना परेशान हो गई हूँ कि मैंने निश्चय किया है कि मैं तुम्हारे पिता से तुम दोनों की शरारतों की शिकायत जरूर करूँगी।'' दोनों बच्चे पिता से बहुत डरते थे। उन्होंने विक्टोरिया से बार-बार क्षमा माँगी और पूरा आश्वासन दिया कि अब दुबारा वे ऐसा न करेंगे।

विक्टोरिया ने बच्चों से कहा "देखों मैं तुम्हारी माँ हूँ, इसीलिये यह सब सहना पड़ता है और अगर तुम लोग नहीं सुधरे तो अगले जीवन में तुम हमारी माँ बनोगे और मैं फिर इसी प्रकार तुमको सताऊँगी।" दोनों बच्चों ने पूछा- ''मदर व्हाट डू यू मीन?, इफ यू डोंट बिहेव देन आफ्टर माई डेथ, आई विल बी रीबार्न ऐज़ योर सन टू टेक रिवेंज बाई टारचरिंग यू। मॉम डैट इज़ अनफेयर।'' ज़िंदगी... मौत..., दोनों बच्चे इसका हल ढूंढने में लग गए। पुनर्जन्म... आदि आदि बातों में बच्चों का मन उलझ गया।

गैरी एवं डेविड ने अपना आखिरी वाक्य समाप्त ही किया था कि टेलीफोन की घंटी टन टन टन करके बजी। लपककर डेविड ने फ़ोन उठाया और तुरंत ही फ्रेंच में कुछ कहा। दूसरी ओर से आवाज़ आई जिसका आशय यह था कि डेविड मैं तुम्हारा पिता जॉन ऑसलो से बोल रहा हूँ। ''गैरी कैसा है, अपनी माँ का ध्यान रखना क्योंकि उसको अक्सर भीषण सर दर्द हो जाया करता है। जब कभी ऐसा हो तो घर पर खामोशी रखना तथा कमरे के पर्दे खींच देना इससे उसको थोड़ा आराम मिलता है।''

पिता से बातें करने के बाद माँ द्वारा कही बातों में डेविड बुरी तरह उलझ गया। भूत-प्रेतों की कहानियाँ जो उसने सुन रखी थीं, मानस पटल पर आ उसे मष्तकों की दुनिया में ले जाने लगीं। 'डेड लाइक मी' फिल्म जो उसने कुछ माह पहले टेलीविज़न पर देखी थी, सच होती दिखने लगी। लोगों द्वारा कहने के बाद भी कि मृत्यु के बाद

पुनर्जन्म मात्र कल्पना है, डेविड पुनर्जन्म में विश्वास करने को तैयार होने लगा। उसने माँ से जाकर पूछाः

''माँ! क्या तुम वास्तव में मानती हो कि मृत्यु के बाद पुनर्जन्म होता है?''

''हाँ बेटे मैं यह मानने लगी हूँ। अभी थोड़ी देर पहले तेरी दादी सपने में आई थी, जो पुनर्जन्म के बाद आजकल जर्मनी के जेल में बंद है। हमलोग चलकर पता लगा सकते हैं कि उस जेल में कोई पीटर नाम का अपराधी है। इससे दूध का दूध और पानी का पानी अलग हो जाएगा। और इस सोच की स्थापना भी। बेटा बुकशेल्फ पर 'टेरेस्टियल प्रोफेसी' नाम की किताब रखी है उसको लेकर आओ।''

डेविड भागता हुआ गया और जेम्स रेडफील्ड की लिखी शोधपरक पुस्तक, जो 1990 के दशक में कई वर्षों तक बेस्ट सेलर रही, उठा लाया। माँ के हाथों में देते हुए कहाः

''माँ, यह किताब एक बार मैंने पढ़ने की कोशिश की थी किंतु कुछ समझ में नहीं आया था। शायद अब आ जाय। कृपया संक्षेप में बताएं कि इसमें क्या लिखा हैः

''बेटा ईशू के जन्म से कई सौ साल पहले से लेकर आज तक के अनेकानेक मृतकों का वर्णन दिया है जिन्होंने किसी अन्य रूप में किसी अन्य देश में जन्म लेकर अपने पूर्व जन्म के बारे में बातें बताईं जो बाद में सही निकलीं।''

'' माँ तो क्या हम वास्तव में मरने के बाद जन्म लेते हैं जैसा आपने आज कहा था?''

''बेटा ईसा मसीह के अनुयायी यह नहीं मानते हैं किंतु कुछ अन्य धर्मं के लोग मानते हैं। पुस्तक में दिए गए प्रमाणों के अनुसार यह सत्य स्थापित होता नजर आता है।''

''माँ इसके बारे में और अधिक सूचना कहाँ से मिल सकती है।''

''मेरे बेटे तुम थोड़ा और बड़े हो जाओ। चार पाँच साल बाद इस किताब को पढ़ना। इंटरनेट से भी तमाम सूचना मिल सकती है। लेकिन इसमें अभी नहीं उलझना।''

एक दिन ये सारी बातें विक्टोरिया ने अपने एक भारतवासी मूल के मित्र राजन से अनजाने ही बताईं। राजन बराबर सोचता रहा विक्टोरिया के विचारों के बारे में। पाश्चात्य सभ्यता के विचारों में पुनर्जन्म जैसे विचारों की कोई मान्यता नहीं होती है, तो फिर विक्टोरिया ने जो कहा वह क्या था। राजन कई दिनों तक इसी उधेड़ बुन में उलझा रहा। बिजली की तरह एक विचार आया कि सम्भवतः विक्टोरिया जीवन चक्र के किसी समय भारतीय मूल की रही होगी अन्यथा जो हुआ वह कभी नहीं

होता। अपने ज्ञान एवं अध्ययन के आधार पर वह जानता था कि यह सम्भव हो सकता है।

ऐसी अन्य अनेक घटनाओं के चित्रण यत्र-तत्र मिलते हैं, जिससे यह ज्ञात होता है कि जीवन-मृत्यु-जीवन का यह चक्र केवल भारतीय मूल के साथ ही नहीं, सम्भवतः मानव जाति से जुड़ा है। किसी एक धर्म एवं मत से इसका कोई सम्बन्ध नजर नही आता है।

डेविड-गैरी यदा-कदा अपनी माँ से पुनर्जन्म और मृत्यु के बारे में पूछते रहते। स्वर्ग-नर्क की बातें भी हो जाती थीं। उन दोनों की आतुरता के आगे विक्टोरिया को हार माननी ही पड़ती थी। एक दिन विक्टोरिया ने बच्चों को इस विषय पर एक पुस्तक लाकर दी और जीवन-मृत्यु के बारे में बुद्ध मत के क्या विचार हैं बताया। बच्चों को पैरेलेल द्वारा प्रकाशित "लाइफ़ आफ्टर डेथ-मारवेल्स एण्ड मिस्टरीज़" में समाहित घटनाएं दिलचस्प एवं रोमांचकारी लगीं। पुस्तक पढ़ने के बाद विक्टोरिया को भी जीवन-मृत्यु-जीवन में कुछ-कुछ विश्वास होने लगा। राजन ने जो कहा था कि... वह रंग लाने लगा था।

देश काल एवं परिस्थितियाँ बदलने से कर्मों की पिटारी कभी खाली नही होती। सम्भवतः ऐसा ही विक्टोरिया की माँ भी सोचती थी। कौन जाने कुछ ऐसा ही डेविड एवं गैरी भी करें।

I I

Tkr dh okilh

जी हाँ चौंकिये नहीं। घटना सही होते हुए भी मनगढंत-काल्पनिक एवं अविश्वसनीय लग सकती है। सात समुंदर पार बैठे पवन के विचारों को लगभग पांच दशक पहले की एक घटना ने झकझोर दिया। पवन उस दिन को भूल चुका था जब उसे नंगे पांव अमीनाबाद पार्क, लखनऊ, से अपने घर तक आना पड़ा था। गज़ब की गर्मी से सड़क का कोलतार पिघल कर पवन के पैरों में चिपक-चिपक कर जलन और पीड़ा देता रहा था। घर पहुँच कर उसने सोच लिया था कि वह फिर कभी भी अपने इष्टदेव, हनुमान जी, के दर्शन के लिए मंदिर न जाएगा। गरीबी में वह बार-बार आंटा गीला करने की स्थिति में नहीं था। फिर इसके बाद जो घटनाएं हुईं उन्होंने पवन को फिर से उसी मंदिर में पहुंचा दिया। कुछ समय पहले मुम्बई में जो हुआ उसने सारा पुराना मंजर एक चलचित्र की तरह सामने ला कर रख दिया।

एक घर पर गोष्ठी में पवन के नए जूते पहन कर कोई चला गया। गोष्ठी के अंत में एक पुराना-घिसा पिटा सस्ता सा जूता लगभग उसी साइज का वहाँ बचा पड़ा मिला। मेजबान ने कहा- ''वह गोष्ठी में आए सभी लोगों को जानता है, फोन कर पूछ लेगा कि गल्ती किससे हुई है?'' पवन के मित्र वैभव ने कहाः

''बंधु कोई अनजाने में ऐसा काम नहीं करता, पुराने जूते छोड़ नए लेकर चलता बने। मतलब यह है कि जो कुछ भी हुआ है वह सब योजनाबद्ध ही हुआ है। फिर गोष्ठी में जाने-पहचाने लोगों के साथ अन्य मेहमान भी आए थे। सबसे पूछना अच्छा न होगा।''

''हाँ, सो तो ठीक है।''

पवन उस छोड़े हुए जूते को किसी प्रकार पहन कर वापस घर चला गया। एक सप्ताह बाद अन्य गोष्ठी में यही घटना वैभव के 'बैली' जूतों के साथ हुई। किंतु सबसे बड़े आश्चर्य की बात यह कि पवन के खोए, चुराए या गुम किए जूते वहां पड़े थे। पवन और वैभव अक्सर बातें करते रहते कि लोगों को अपनी गल्तियों को सुधारने का अवसर मिलना चाहिए। और अगर ऐसा हो पाता तो सबको चाहिए कि वे ऐसे व्यक्ति को क्षमा कर दें। इस संदर्भ में बहुचर्चित कहावत को दुहरा कर आगे बढ़ लेते। जानवर और यहाँ तक कि एक अजगर के बच्चे की वापसी तो सुनने में आ

चुकी है किंतु जूतों की तो कभी नहीं। अब तो जितने लोग बचे थे उनमें एक हलचल सी मच गई। धीरे-धीरे लोगों के चले जाने के बाद वैभव ने बाहर आते हुए पवन से कहाः

''देखो पवन, यह तो साफ है जिसने भी यह घिनौना काम किया है वह व्यक्ति दोनों जगहों पर था। हम दोनों के अलावा एक ही ऐसा व्यक्ति बचा। वह हैं हमारे जाने-माने परम आदरणीय रचनाकार रजनी अस्थाना।''

''तुम्हारा क्या विचार है? हमें इस नाजुक समस्या का समाधान कैसे करना चाहिए जिससे हमारा उद्देश्य भी पूरा हो और साहित्यकार समाज की बदनामी भी न हो।''

''देख वैभव। मेरे विचार से रजनी जी ने सब ठीक से समझ और जान-जान कर किया है। पहले तो उन्होंने अपने पुराने सस्ते जूतों के स्थान पर मेरे कुछ मंहगे और नए जूतों पर हाथ साफ किया और अब बाजार में सबसे मंहगे मिलने वाले जूते उठाए हैं। उन्हें सीख तो देनी ही पड़ेगी जिससे सांप भी मर जाय और लाठी भी न टूटे। अब रजनी हमारी मंडली में आने लायक नहीं रहा लेकिन उसके साथ दुश्मनी भी नहीं की जा सकती। उसकी कलम में जादू है, साहित्य संसार में उसकी अच्छी धाक है।''

''पवन अब मैं घर कैसे जाऊं?''

''वैभव यह तो बड़ा आसान है। तुम जो जूते मैं रजनी के पहन कर आया हूँ पहन कर चले जाओ। मैं अपने जूते पहन कर चला जाता हूं। समस्या के समाधान की एक युक्ति समझ में आ रही है। तुम किसी बहाने रजनी के जूते पहन कर उसके घर जाओ और अपने जूते लेकर वापस चले आओ। कुछ करने या कहने की जरूरत ही नहीं है। वह सब स्वतः समझ जाएंगे।''

''पवन तरकीब तो ठीक लगती है। पहले रजनी से बात कर देखना होगा कि उसके क्या विचार हैं, इस संदर्भ में। वह क्या कहानी बनाते या कहते हैं?''

घूम फिर कर पता नहीं कहाँ-कहाँ की यात्रा कर मीलों चल कर पवन के जूते उसके पांव में थे। लगा जैसे दोनों-पवन और जूते खुश थे। पवन के पैरों को आराम मिला और जूते सरपट भाग रहे थे। वैभव ने एक योजना बनाई और घर पहुंचते ही रजनी के मोबाइल पर फोन मिलायाः

''रजनी जी नमस्कार, मैं वैभव।''

''हाँ भाई बोलो। कैसी लगी गोष्ठी। आवभगत तो अच्छा था। कविताओं का स्तर दिनों दिन बेहतर होता जा रहा है। इस सुपरिवर्तन के लिए आप और पवन बधाई के पात्र हैं।''

‘‘रजनी जी धन्यवाद साधुवाद के लिए। लगता है कि आजकल दिल्ली के काले बंदर की तरह कोई मुम्बई में भी आ गया है। पता नहीं वह कौन है जो लोगों के जूतों के पीछे पड़ गया है। दो हफ्तों में पहले पवन के और आज मेरे जूते बदल दिए गए हैं।’’

‘‘तुम ठीक ही कह रहे हो। उसी दिन पता नहीं कौन कम्बख्त मेरे जूते लेकर चलता बना। मेरी ही जगह पर जो जूते पड़े थे मैं उन्ही को पहन कर वापस आ गया जो मुझको तंग जरूर थे। मैं कई विदेश के विभिन्न शहरों में वर्षों से बराबर जाता रहा हूँ। भारतीय समाज से प्यार-सत्कार पाकर मन बार-बार कहता कि ऐसा पूरे विश्व में क्यों नहीं हो रहा है? प्रवासी भारतीयों भारत का मान बढ़ा रहे हैं। वे भारतीयता की ओर अग्रसर हो रहे हैं और हम भारत में उससे दूर होते जा रहे हैं। देखिए न इस जूते के किस्से को।’’ मौका पाते ही वैभव ने पूछाः

‘‘आपके जूते कहीं बाटा के तो नहीं थे जिन पर ऊपर एक गांठ पड़ी है।’’

‘‘ठीक वही, तुमको कैसे मालूम?’’

‘‘आज मेरे जूते नदारत थे। जो जूते वहाँ पड़े थे मैं उन्ही को पहन कर घर आ गया।’’

‘‘नहीं भाई, यह गलती तो मुझसे हुई है। मैं आज जानबूझ कर उन पुराने जूतों को जिनको पहन कर दो हफ्ते पहले आया था वहीं छोड़ कर, शायद तुम्हारे जूते पहन कर आ गया हूँ। चलो भाई अच्छा हुआ। हम दोनों अपने-अपने जूतों की अदला-बदली कर अपने-अपने पांवों की सुरक्षा करें।’’

वैभव मन ही मन सोचता रहा कि रजनी ने कितनी चालाकी से दोष किसी और के सर मढ़ कर बच निकलने की असफल कोशिश की। चलो अच्छा हुआ सांप भी मर गया और लाठी भी नहीं टूटी। वैभव ने तुरंत फोन पर सारी बातें पवन को बताईं। पवन को विश्वास नहीं हो रहा था कि रजनी को इतनी बातें बनाना भी आता है। अपराधी होते हुए अपराध किसी और के हिस्से में डाल दिया। इसके पहले कि कोई कुछ बातें बनाए रजनी ने साफ बच निकलने का पूरा प्रबंध कर लिया। पवन ने वैभव से कहाः

‘‘कल ही हम दोनों रजनी के घर चलते हैं। हमारे जूतों को देख कर उसको सब स्वयं पता लग जाएगा। बिना कुछ कहे हमको उसके चेहरे के भाव देखने चाहिए।’’

‘‘ठीक है पवन मैं फोन कर कल शाम का समय निर्धारित कर लेता हूँ।’’

इन जूतों की घटनाओं ने पवन को अपने 1958 में गायब हुए जूते की गाथा याद आ गई। वह जिंदगी के उन पन्नों को उलटने-पलटने का प्रयास करने लगा। भारत के मंदिरों से जूतों का गायब होना तो आम बात है। इसीलिए भक्तजन मंदिरों में भगवान के दर्शन के लिए अच्छे कपड़े किंतु पुराने जूते ही पहन कर जाते हैं। याद

आने लगाः

‘पवन के विश्वविद्यालय के ये प्रारम्भिक दिन थे। अमीनाबाद, लखनऊ, में स्थित हनुमान मंदिर में जाना प्रारम्भ कर दिया। रोज प्रातः पढ़ाई करने के लिए चटाई, किताबें, कापियाँ एवं पेन-पेंसिल लेकर छत पर चला जाया करता। थोड़ी देर बाद धूप निकलने पर चाय बनाने के लिए नीचे कमरे में उतरता। यह पवन का दैनिक क्रम था। कुछ दिनों बाद नऐ जूते पहन मंगलवार के दिन मंदिर गया। जूते बाहर उतार दिए। पूजा कर जब बाहर आया तो जूते गायब थे। बहुत खोज पड़ताल के बाद भी जूते नहीं मिले। पवन पलट कर अंदर गया। सर झुका कर प्रार्थना की- ‘‘आपके दर्शन मंहगे पड़े, अब मेरा आना न हो पाएगा। शीघ्र ही जूते खरीदने की हालत में नहीं हूँ।’’ नंगे पांव घर वापस आ गया। ऊपर छत पर जा पढ़ने की प्रक्रिया जारी रही। लगभग दो-तीन सप्ताह के बाद एक दिन जब पवन चाय बना कर छत पर आ रहा था तो देखा कि एक छोटा और दो बड़े बंदर छोटी दीवार से कूद कर चटाई तक आ पेन-पेंसिल उठा कर दीवार पर वापस जा कूच-कूच कर नीचे गिरा पवन की ओर देख कर चले जाते हैं। इन बंदरों ने वह नहीं किया जो वे स्वभावतः करते हैं। मतलब कि पुस्तकें-कापियाँ सुरक्षित रहीं। सारे दिन पवन इसी उधेड़-बुन में लगा रहा कि बंदरों ने ऐसा क्यों किया?

दूसरे दिन प्रातः पुनः पढ़ाई करने के लिए चटाई, किताबें, कापियाँ एवं पेन-पेंसिल लेकर छत पर चला गया। अब तक एक दिन पहले हुआ दृश्य पवन के दिमाग से निकल चुका था। और जब वह चाय बना कर छत पर पहुंच रहा था तो, सम्भवतः, वही तीनों बंदर दीवार पर बैठे थे। कूद कर पेन-पेंसिल उठाया और कूच कर नीचे गिरा चलते बने पवन की ओर देखने के बाद। पवन को अब चिंता होने लगी।

रात में पवन को सपने में आदेश मिलता है कि हनुमान मंदिर में जाना पुनः शुरू करो। संयोगवश अगला दिन मंगलवार ही था। शाम को उसी मंदिर में जाकर क्षमा मांग अपनी विवशता जताई। प्रार्थना कर वापस आ गया। बुधवार को वे तीन बंदर तो दिखे किंतु इस बार उन्होंने कुछ नहीं किया। छत पर आता देख वे चुपचाप चले गए। बुधवार के बाद वे तीन बंदर दुबारा कभी नहीं दिखे। पवन ने इसको साक्षात पवनसुत का प्रसाद मान लिया।

जूतों से सम्बंधित ये घटनाएं पवन और वैभव के बीच चर्चा का विषय बनती रहीं। पवन कहता :

‘‘वैभव ऐसी घटनाएं यूं ही नहीं हुआ करतीं। ये सारी हमारी जिंदगी की किताब में जन्म के समय ही लिख दी जाती हैं। जन्म से मरण तक जीवन के प्रतिदिन के

लिए एक पृष्ठ निर्धारित होता है। सब उसी के हिसाब से होता है। इनके पीछे कोई न कोई रहस्य छिपा होता है। रहस्य कभी-कभी तुरंत खुल जाता है और कभी-कभी कुछ समय बाद।''

''तो तुम क्या सोचते हो तीन बंदरों वाली घटना के पीछे क्या रहस्य रहा होगा?''

''वैभव यह मेरी सोच है। हनुमान जी ने मुझ पर कृपा कर यह बताया कि आस्था-विश्वास इतनी जल्दी नहीं डिगाना चाहिए। मेरी अपनी विवशता थी। मैं हनुमान मंदिर में दर्शन के लिए हर मंगलवार को 6 वर्ष की आयु से निरंतर जाता रहा हूँ। मेरे इष्ट को यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने मेरी परीक्षा ली और मैं फेल हुआ। सपने के माध्यम से मुझको वह मार्ग पर लेकर आए। तबसे मैंने घर में ही एक मंदिर बना रखा है और मैं रोज उनका स्मरण करता हूँ, सम्भवतः वह ही मेरे सारे काम आसान बनाते रहते हैं। ऐसा मेरा विश्वास है।''

''क्या तुम्हारे ईष्ट के पास और कोई रास्ता नहीं था तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए।''

''वैभव यह तो वह ही जानें।''

''पवन जो तुमने बताया वह हो तो सकता है। अच्छा अब यह बताओ कि दूसरी घटना के पीछे क्या रहस्य रहा होगा?''

''वैभव, पहले तुम बताओ कि क्या सोचते हो।''

''पवन तुम्हारे विचारों के अनुसार ये बातें हमारी, तुम्हारी और रजनी के जीवन की किताबों के अनुसार हुआ है।''

''वैभव, यह तो ठीक है। लेकिन क्यों?''

''शायद यह जताने के लिए कि साहित्यकार-कलाकार पहले इनसान होता है। दोनों में भी मानवीय संवेदनाएं एवं कमजोरियाँ होती हैं। रजनी से यह सब शुरू हुआ और वही इसका मुख्य कारण रहा। शायद हमको यह बताने के लिए कि रजनी से सतर्क रहो। वह विश्वास करने लायक नहीं है।

''वैभव, बिलकुल ठीक। मैं भी यही सोचता हूँ। चलो देर आए दुरुस्त आए। हम लोगों ने तो रजनी अस्थाना को अनुकरणीय व्यक्ति मान लिया था कि वह कोई गलत काम कर ही नहीं सकता।''

पवन देखा जूतों का बहुत ही सीमित जीवन होता है। किंतु ऐसे अनुभव बड़े कीमती होते और अहमियत रखते हैं। हम रजनी पर विश्वास करना छोड़ कर उसे अपनी किताब से बाहर कर देते हैं। अंत भला सो सब भला।

॥

rEg Nuk pkgrk g

उसने आज फिर मुझे आवाज़ दी। बिलकुल स्पष्ट, चिरपरिचित, मधुर एवं सम्मोहक। इतने वर्षों बाद इस आवाज़ ने मन-मानस में कौतूहलता तथा शिराओं में बिजली दौड़ा दी। कानों पर विश्वास न करना मेरे वश में नहीं था। आवाज़ के वाहन पर सवार मैं साथ-साथ चल पड़ा। किन-किन रास्तों से गुजरा, कुछ याद नहीं। किंतु वहाँ पहुंच कर जो देखा वह चलचित्र की तरह आँखों के सामने है। वहाँ पहुँच कर लगा कि किसी तिलस्मी दुनिया से गुजरने के बाद मैं उसके राज दरबार में खड़ा हूँ। पहुंचते ही भय एवं आशंकाओं से मन परेशान हो उठा था। अदृश्य आवाज़ ने सब देखते और समझते हुए कहा- ''क्यों घबराते हो, मैं तुम्हारे साथ-साथ रहूँगी।'' मेरी चेतना सो गई और विवेकशून्य मैं दृश्यों को आत्मसात करने लगा।

आवाज़ ने रास्तेभर अनेकानेक संकेतों के माध्यम से अपनी पहचान जताने की पुरजोर कोशिश की, किंतु मेरे लिए सब विफल रहीं। पंखहीन मैं, प्रकाश की गति से भी तीव्र, आवाज़ के पीछे-पीछे उड़ता रहा। एक गाइडेड मिसाइल की तरह पूरे रास्ते तरह-तरह के लोगों ने आवाज़ का अभिवादन कर मेरा स्वागत किया। सम्भवतः वे सब इन रास्तों के प्रहरी थे। कौन थे वे लोग कुछ पता नहीं किंतु रूप, रंग एवं आकार से वे विभिन्न देशों के लगते थे। शीघ्र ही मैंने अपने आपको एक कमरे के सामने पाया। कमरे के चारों ओर चौड़े-चौड़े गलियारे थे। एक बहुत ही बड़ा सा कमरा जिसकी चारों दीवारों पर चौखटें तो थीं किंतु दरवाजे नहीं। 'अंदर आओ मैं दरवाजा खोल रहा हूँ।' एक आवाज़ ने संकेत किया।

''कितुं दरवाजा तो है ही नहीं फिर इसका खुलना कैसा?''

'तो लो फिर यह दरवाजा नहीं खुलता है। तुम प्रयास कर देख लो।'

जैसे ही मैंने अंदर घुसने का प्रयास किया तो पहले किसी चीज़ से सर टकराया, सम्भवतः दरवाज़ा और फिर दो चौकीदारों ने मुझे बाहर फेंक दिया। 'बहस न करो शीघ्र ही अंदर आओ, तुम्हारे पास बहुत कम समय बचा है। रास्ते भर इधर-उधर देखने में तुमने देर कर दी है। तुम रास्ते की हर चीजों को रुक-रुक कर देखते और समझते जा रहे हो। तुम्हे मालूम नहीं यह देरी कितनी घातक हो सकती है।' दरवाजा खुलते ही असंख्य लोगों ने आकर मेरा स्वागत कर सबने मेरा हालचाल पूछा, ठीक उसी प्रकार

जैसे सुग्रीव सेना के एक-एक सिपाहियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम से किया था जब जनक नन्दिनी की खोज में वह जंगल-जंगल भटक रहे थे। बाद में पता चला कि मैं एक दूसरी दुनिया का रहने वाला हूँ और सब कुछ जानते हुए भी वे सारी खबर लेना चाहते थे। दूर से ही यह कमरा अजीब सा लगा था। पूर्वी द्वार पर पहुंचते ही उस आवाज़ ने बिदा ली और कहाः

'अच्छा, मैं अब चलती हूँ। मेरा यह काम पूरा हुआ। बेटे तुमने मुझे पहचाना नहीं, मैं तुम्हारी माँ हूँ। घबराना नहीं मैं तुम्हारे साथ रहूँगी। बेटे तुमको याद होना चाहिए कि तुम एक बार मेरी एक बात से बहुत परेशान हो उठे थे, सम्भवतः 1952 में, जब मैंने तुम्हे बताया था कि तुम्हारा एक चाचा भी था जिसको भारत माँ ने आवाज़ दी थी और वह अपने नन्हे से बेटे को छोड़ कर घर से चला गया था।'

''हाँ माँ अब मैं आपकी आवाज़ को पहचान गया हूँ। मुझे सब याद है। और इस घटना के बाद ही मैंने चाचा को सम्बोधित करते हुए जीवन की पहली कविता भी लिखी थी। तुम आ जाते तो क्या होता.....। कविता के शब्द कुछ इस प्रकार थे।'' माँ तुम्हे तो याद होगा, मैं तुमको अंतिम बिदाई भी न दे पाया था। मेरे पहुंचने से पहले ही आपके पांचो तत्वों को प्रकृति को सौंप दिया गया था। मैं अंतिम बार आपके चरण स्पर्श भी न कर पाया था। तुम प्रतीक्षा न कर सकीं और मैं समय पर पहुंच न पाया। तुम्हारी भी अपनी मजबूरी थी। माँ मैं सब समझता हूँ। तुम्हारा छोटा सा कद, बिखरे हुए बाल, सामने के दो टूटे हुए दांत, चेहरे पर झुर्रियों का जमघट, न कानों में कोई बाली या नाक में नथनी, सदा की तरह शांत शून्य चेहरा, सर को ढके साफ धुली हुई सूती साड़ी, गले में तुलसी की माला, दोनों हाथों पर सिकुड़ी त्वचा के बीच उभरती हुई मांस पेशियां, बिंवाई से फट रहे नंगे पांव। माँ तुम मेरे सामने होते हुए भी मुझसे बहुत दूर लग रही हो, मैं तुम्हें छूना चाहता हूँ। तुम्हारे शरीर की ऊष्मा से मैं अपने मन मानस में ऊर्जा भरना चाहता हूँ। माँ मुझको और अधिक दंडित न करो।''

'लेकिन मेरे बेटे अभी वह सम्भव नहीं है। मेरी भी कुछ मजबूरियाँ एवं सीमाएं हैं और तुमको अभी यहाँ बहुत कुछ देखना, सुनना और अनेक प्रिय लोगों से मिलना है। समय कम है, यह तुम नहीं मैं जानती हूँ।'

''माँ, तुमको क्या मेरी ये पंक्तियाँ याद हैं-'माँ स्पर्श प्राप्त कर तेरा, और घोर निद्रा पाता था, प्रातःकाल सदा उठते ही तुझको चाय लिए पाता था?''

'हाँ.....हाँ मेरे बेटे सब याद है। यह कविता तूने 1956 में अपनी मौसी के घर जबलपुर में लिखी थी जहाँ तुझको कभी गांधी जी ने अपने हाथों से उठा कर दुलराया था। और अपने मौसा से बहुत कुछ सीखा भी था। जबलपुर तुझे शुरू से

ही बहुत भाता रहा। तेरी एक-एक बातें, सारी शरारतें, जन्माष्टमी वाली रात बिना किसी को बताए बिना तेरा ध्रुव बनना जब तू केवल 3 वर्ष का था, बड़ा हो कर स्कूल के लिए नाटकों का लिखना और उनका मंचन कराना, बच्चन जी के कवि सम्मेलन में उनको पूरी रात सुनना, उनकी मधुशाला के आधार पर छंदों का लिखना, आदि आदि। बेटे मैंने तेरे साथ क्या-क्या अन्याय नहीं किया। उर्दू न पढ़ने के लिए और हिंदी पढ़ने के लिए पहले मैंने फिर बाद में तेरे पिता ने मार-मार कर अधमरा कर दिया था और उस मार के निशान अब भी तेरे दाहिने हाथ की बीच वाली उंगली पर मौजूद हैं। कैसे भूल सकती हूँ वह घोर अन्याय और अपराध जब मेरे कारण तेरी रचनाओं को तेरी भाभी ने, अनजाने में, घर में बुरादे की अंगेठी जलाने के लिए इस्तेमाल कर उन्हें समाप्त कर दिया था। कहां तक गिनाऊं तुम पर किए गए जुर्मों के बारे में। और तुमने हर बार मेरा सम्मान रखा। बेटे तुम एक होनहार साहित्यकार और समाज सेवक बन सकते थे किंतु मैंने ही तुम्हे ऐसे मार्ग पर जाने से रोका था। इन सब बातों को याद कर मेरा मन रोता रहता है। किंतु बेटे अपने दायित्व, और तुम्हारे छोटे भाई-बहनों के बारे में सोच कर चिंतित रहती रहने के कारण अपराध कर बैठती थी।'

''माँ, तुमने न कोई अन्याय किया या अपराध ही। दुःखी न हों। मैं बहुत आनन्द से सुखी और खुश हूँ। मेरी माँ जो रचनाएं जल कर काल के गर्भ में समा गईं, उनकी यही नियति थी उनका जीवन क्षणभंगुर था। माँ तुमने मुझे तुलसी की रामायण दी, हनुमान चालीसा दिया, ईश्वर की ओर बढ़ने की प्रेरणा दी और रास्ता दिखाया। माँ तुमने मुझे बीजमंत्र 'दीन दयाल बिरद समभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।'' दिया जो आज तक मुझको हर मुसीबतों से बाहर निकालता रहा है। माँ मैं कहाँ तक गिनाऊं जो-जो तुमने मुझे दिया। तुमने माँ मुझे वह सब दिया जिसके सहारे खड़ा हो कर मैंने समाज में अपनी पहचान बनाई है। माँ आप दुखी न रहें, अन्यथा माँ सीता को दुखी देख कर जो हाल अंजनी पुत्र का अशोक वाटिका में हुआ था, वैसा ही मेरा भी हो सकता है। यहीं आपके सामने। किंतु माँ मैं बस एक बार और आखिरी बार तुमको छूना चाहता हूँ।''

'नहीं बेटे अभी नहीं जैसा कि मैं कह चुकी हूँ। मेरी आवाज़ सुनते जाओ। समय बहुत थोड़ा बचा है, वापस भी जाना है उस लोक को जहाँ तेरा भौतिक शरीर पड़ा है। देरी हुई तो चारों ओर कोहराम मच सकता है। इस बड़े से कमरे में विश्व छोड़कर आए सभी तनधारी लोगों के सूक्ष्म शरीर हैं। गांधी, नेहरू, सुभाष, चन्द्रशेखर आज़ाद, इन्दिरा गांधी, तुम्हारे पिता, कैनेडी, मार्टिन लूथर किंग, ईदी अमीन आदि आदि। इन सबको तुम विभिन्न रूपों में पाओगे और अंदर की आँखों से देखोगे भी।

दरवाजे पर जिसने तुमको रोका था, पहचाना नहीं वे ईदी अमीन एवं केन्याता थे। अब कमरे को और इसके लोगों को पहचानो। मैं शीघ्र ही फिर आती हूँ तुमको वापस ले जाने के लिए।'

कमरे में पहुंचते ही लगा कि मैं एक ऐसे स्थान पर हूँ जहाँ पूरे कमरे में मक्खियों की तरह छत से फर्स तक लोग लटके हैं। हर ओर से लोग मुझे घेरे हुए थे। गाँधी ने अपने तीन बंदर दिखाए तो नेता जी सुभाष ने तिरंगा झंडा फहराया। सबने अपने-अपने अनोखे ढंग से अपनी पहचान का परिचय दिया। इतने में वह आवाज़ फिर से गूंजी-'अपने पिता से नहीं मिलोगे? वह बड़ी देर से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

'लेकिन माँ वह कहाँ हैं? दिखते क्यों नहीं?'

'देखो वह तुम्हारे पीछे अपने चेहरे को छिपाए खड़े हैं। तुम पर किए गए जुर्मों के कारण वह सामने भी नहीं आ पा रहे हैं। क्या तुम अपने पिता को क्षमा नहीं करोगे? मैं उनकी ओर से क्षमा मांगती हूँ। बहस न करना। सिर्फ इतना ही कहना- 'पिता जी मैंने आपको क्षमा किया। फिर देखना वह तुम्हारे सामने आकर तुमको गले से लगा कर खूब रोएंगे जो वह पहले किया करते थे। शायद तुम्हें कुछ घटनाएं याद हों।'

''माँ, यह सब तो ठीक है लेकिन यह तो पहले कभी नहीं सुना था कि पिता ने अपने पुत्र से क्षमा मांगी हो। ऐसा करने से मुझ पर पाप चढ़ेगा। माँ आप मुझसे ऐसा क्यों करवा रही हैं?''

'बेटे जो तुमने कहा वे सब मृत्युलोक की बातें हैं जहाँ तुम इस समय नहीं हो। यहाँ की आचार संहिता बिल्कुल भिन्न है। जब तक अपने पिता को अपने वचनों से क्षमा नहीं कर देते तब तक तुम उनको न देख सकते हो न मिल ही सकते हो। निर्णय तुमको ही करना है।'

''ठीक है माँ जैसा आपका आदेश।''

''पूज्य पिता जी मैंने आपको क्षमा किया। अब तो कृपया सामने आएं।''

इतने में मैंने अपने सामने पिता की चिरपरिचित छाया देखी। बहुत कमजोर नज़र आए। जल्दी-जल्दी मुझको आशीर्वाद देने के बाद उन्होंने भविष्य में क्या-कब होने वाला बता कर गायब हो गए यह कह कर कि- 'अब मैं चैन से रह सकता हूँ।'

पिता जी ओझल हो गए और मैं उनको पुकारता ही रह गया। निराशा-हताशा के गहरे अंधकार के सागर में डूबने ही वाला था कि किसी ने पुकारा- 'सामने देखो, कोई तुम्हे इशारे से अपनी ओर बुला रहा है।' इन सबके बीच पार्श्व-गायन, मधुर

एवं सम्मोहक आवाज़ में, 'वैष्ण भजन तोते ने कहिए पीड़ पराई जाने दे...' चलता रहा। ऐसा लग रहा था कि यह आवाज़ कहीं बड़ी दूर से आते हुए बड़े कमरे में गूँज रही थी जहाँ अभी थोड़ी देर पहले ही पिता जी के साथ मुलाकात हुई थी। नज़र उठा कर देखा तो मेरी माँ के कदम बड़ी तेज़ी से मेरी ओर बढ़ते आ रहे थे। लगा ऐसा कि सारा कमरा उनके आते ही खाली हो गया था। बिना अपने आंचल में मुझे लिए माँ ने कहना शुरू किया :

'बेटा! आज मैं वर्षों बाद मुस्कराई हूँ और सही तरीके से प्रसन्न भी हूँ। तुमने अपने पिता को मुक्त जो कर दिया है। वह बराबर दुःखी रहते थे। मैंने इस समय तुमको अपने पास इसीलिए बुलाया था। इस अवसर की प्रतीक्षा मैं एक लम्बे अरसे से करती रही हूँ। मृत्यलोक में तो तुम मेरी बात मानते ही नहीं। पिता जी ने तुमसे जो-जो कहा वह सब मैंने सुना है। अब कुछ वे बातें जो वह समयाभाव के कारण नहीं कह पाए और मेरे लिए छोड़ दीं। तुम कैंसर से ग्रसित अस्पताल में पड़े हो। बहू, पौत्र एवं पौत्रवधू के साथ अन्य सभी चिंतित हैं। डॉक्टर ने भी आगाह किया है। कुछ समय तक परेशानियाँ बनी रहेंगी किंतु यह कैंसर जानलेवा नहीं होगा। सबका घबराते रहना स्वाभाविक रहेगा। किंतु तुम एक बार फिर मौत को खाली हाथ वापस कर दोगे। तुम्हारे बिना यहाँ मैं निपट अकेली रहती हूँ और सोचा था कि अब तुम मेरा साथ दोगे। किंतु नहीं अभी नहीं। सबको तुम्हारी ज़रूरत है मेरी ज़रूरत से ज्यादा। मैं हर पल तुम्हारे साथ रहूंगी। जब-जब तुम्हारी आँख में आँसू आएंगे जान लेना मैं तुम्हारे आस-पास ही हूँ। बेटे अब तुम्हें मृत्युलोक में वापस ले जाने का समय आ गया है। जाओ यहाँ के सभी लोगों से विदा मांग कर आ जाओ।'

''लेकिन, माँ...।''

'हाँ, हाँ बेटे मैं सब समझती हूँ। यही न कि तुम मुझे छूना चाहते हो। बेटे मेरे शरीर में क्या रखा है? भौतिक स्पर्श को भूल जाओ। मैं साकार से निराकार हो गई हूँ जो मेरी असली पहचान है। अच्छा तो तैयार हो जाओ।'

मेरी आँख जब खुली तब मैं वापस अस्पताल के अपने बिस्तर पर था। कुछ कर्मचारी अपने-अपने काम में व्यस्त थे। इन सबके बावजूद पता नहीं क्यों मेरे दिमाग में 'मैं तुम्हे छूना चाहता हूँ' की आवाज़ गूँजती रही। किंतु मौत का भय जाता रहा।

❙❙

NÙkh l fnu dk ?kj

अब ऐसा लगता है कि भैरव के क्यी.ई.एच. 727 में घर बनने की योजना कई वर्षों पहले बन चुकी थी। धरती का यह भूभाग, जहाँ कभी दिन में निःशुल्क कार पार्क हुआ करता था तथा धुंधलका होते-होते बच्चों के खेल का मैदान एवं नव सिखियों के लिए कार चलाने का अभ्यास स्थल। आज उसी स्थान पर यह सबसे आधुनिक बनावट वाली अर्धवृत्ताकार कई मंजिला इमारत खड़ी है जिसने अनेक लोगों के घर बसाए हैं तथा बर्मिंघम के आकर्षणों में से एक बन गई है। भैरव कई बार इसी मैदान को पैदल पार कर, वर्षों पहले, अपने घर जाता रहा है। अनायास ही उसके दिमाग में एक संध्या की घटना, जब धुंधलका बढ़ रहा था, कौंध गई। दो विरोधी युवा समुदायों के बीच किसी छोटी सी बात को लेकर बहस शुरू हुई। बातों ही बातों में दोनों समुदाय के युवकों के हाथों में बड़े-बड़े चाकू चमकने और चलने लगे। कुछ ही समय में वह धूल धूसरित स्थान हल्दीघाटी सा दिखने लगा। दो युवकों के मृतप्राय शरीर ढेर हो चुके थे। स्थिति का आकलन करते हुए भैरव ने अपने मोबाइल फोन से 999 को फोन कर दिया कि सम्भवतः क्या होने वाला है। भैरव ने मोबाइल के कैमरे में युद्ध के कुछ चित्र भी खींच लिए थे। युवा वर्ग भैरव की उपस्थिति से अंजान था। एम्बुलेंस दोनों युवकों को पास के ही सेलीओक अस्पताल ले गई। बाकी सारे नौजवान अब तक डर कर भाग चुके थे।

सामान्य कद-काठी, सांवले वर्ण, लम्बा चेहरा, प्रश्नमयी आँखों वाले भैरव का आगमन यू.के. में लगभग चार दशक पहले हुआ था। सुशिक्षित भैरव ने यू.के. पहुंच कर कई अन्य उपाधियाँ प्राप्त कीं और बर्मिंघम के एक विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के रूप में काम करते हुए रहने लगा। बेटे तुहिन-पत्नी रीना के साथ भैरव का जीवन खुरदरे रास्तों पर चलता हुआ आगे बढ़ता गया। वह साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहने लगा। समाज ने भी उसे आदर एवं सम्मान दिया। लगभग 15 वर्ष पूर्व सिरदर्द एवं चक्कर से भैरव परेशान रहने लगा था। यहाँ तक कि एक बार वह कार चलाते हुए सबसे अधिक व्यस्त चौराहे पर लालबत्ती होते हुए भी बिना रुके निकल गया। तुरंत ही रीना ने पूछा थाः

''यह आपने क्या किया, लाल बत्ती में निकल आए? बहुत बड़ी दुर्घटना हो

सकती थी।''

''रीना मुझको इसका कोई भी एहसास नहीं कि मैंने ऐसा कुछ किया।''

इस प्रकार की घटनाएं होती रहीं। भैरव ने सारी बातें अपने जी.पी. (डॉक्टर) से बताईं और यह भी जताया कि 'जबसे यह क्रम चला है उसको ट्वायलेट दिन में कई बार जाना पड़ता है। हो सकता है सिर दर्द और चक्कर का सम्बंध पेट की खराबी से हो।' जी.पी. ने बिना कुछ सोचे और गौर किए कह दियाः

''आपकी परेशानी का कारण पेट नहीं कोई मस्तिष्क विकार होगा। सारे टेस्ट करवाने होंगे।'' निरीक्षण प्रक्रिया लगभग दो साल तक चली। तरह-तरह के टेस्ट हुए किंतु कुछ भी पता न लगा। भैरव की दैहिक परेशानी बदस्तूर जैसी थी वैसी ही रही। बल्कि मानसिक तनाव बढ़ता रहा। भैरव यद्यपि निराश एवं हताश हो चुका था किंतु हारा नहीं था। सभी डॉक्टरों एवं अन्य व्यावसायिक लोगों ने कहा :

''आपको कोई मानसिक कष्ट है और जब तक आप यह बताते नहीं हम मजबूर हैं।'' भैरव के लाख कहने पर भी किसी भी डॉक्टर ने उस पर विश्वास नहीं किया। विश्वविद्यालय पर उसके सहयोगी भी चिंतित रहने लगे। अभिमन्यु की तरह इस सिर दर्द और चक्कर के व्यूह में वह निपट अकेला हो गया। यहाँ तक कि रीना भी सबके साथ होली और तरह-तरह के प्रश्न करने लगी। भैरव सबको बताते हुए थक चुका था कि उसको कोई मानसिक क्लेश नही है। यहाँ तक कि नौकरी छोड़ने और समय से पहले अवकाश लेने की बातें होने लगी। यह सब चल ही रहा था कि उसके मस्तिष्क में विचार आया कि हो सकता है उसकी बीमारी का इलाज प्राकृतिक चिकित्सा एवं प्राणायाम में हो। सम्पर्क करने पर भारत के ऐसे एक शोध संस्थान से भैरव को सूचना मिलीः

''परेशानी की जड़ पेट ही है। संस्थान ने बर्मिंघम के अपने एक अध्यापक का पता भेज दिया और बताया कि क्या करना होगा?''

भैरव ने ईलाज शुरू कर दिया। कोई खास लाभ न होने पर उसने भारत जाने का निश्चय कर लिया। विश्वविद्यालय से 8 हफ्तों का अवकाश ले वह भारत के एक आश्रम में पहुंच गया। तीसरे ही दिन प्राकृतिक चिकित्सक ने बतायाः

''आपके परेशानी की जड़ पेट में पैदा हो रहा अम्ल (एसिड) है। आपका पेट ज़रूरत से अधिक अम्ल पैदा कर यह सारा काम कर रहा है। सबसे पहले हम आपका पेट 'एनीमा' द्वारा साफ करेंगे और उसके बाद ही कुछ दवाएं देंगे। कल से ही 'उषापान' एवं विशेष प्रकार के प्राणायाम की प्रक्रिया भी शुरू करेंगे। आज ही प्राणायाम गुरु सब आ कर समझा देंगे।''

एनीमा ने तो कमाल ही कर दिया। पेट से इतना कचरा निकला कि विश्वास

ही न हुआ, भैरव को, कि यह सब उसके ही पेट से बाहर आया है। भैरव अपने आपको हल्का महसूस करने लगा। दूसरे दिन से बाकी प्रक्रियाएं भी शुरू हो गईं जो पहले ही समझा दी गई थीं। सबसे पहले, उषापान, बिना दातून किए लगभग 1.5 लीटर गुनगुना पानी उकड़ू की स्थिति में बैठ कर पीते हुए नाभी के चारों ओर दूसरे हाथ से वृत्ताकार रूप में घुमाना था। भैरव के लिए इतना अधिक पानी एक बार में पीना आसान न था। इसके तुरंत बाद ट्वायलेट जाने की चाह हुई। एनीमा के दूसरे दिन फिर खूब कचरा निकला। प्रातः के लगभग 6 बजे योग गुरु ने कमरे पर दस्तक दी और योग क्रियाओं का क्रम प्रारम्भ हो गया। यह क्रम निरंतर तीन दिन तक चला। पेट से कचरा निकलना बंद हो गया। एनीमा बंद कर दिया गया किंतु बाकी क्रियाएं चलती रहीं। चौथे दिन से सिर का दर्द-चक्कर का आना बंद हो गया। आश्रम में लगभग 12 दिन रहने के बाद, सिरदर्द आदि से छुटकारा पा, भैरव अपने निर्धारित समय से पहले बर्मिंघम वापस पहुंच गया। आश्रम ने बताया था कि ऐसा सब होने का मुख्य कारण था उसका बहुत अधिक चाय-कॉफी तथा अम्लीय पदार्थों का सेवन। भैरव ने इन सबका परित्याग कर दिया। इन सबसे एक और लाभ हुआ कि सालों से हो रहे टखनों का दर्द भी जाता रहा।

वापस आकर यू.के. में, और भारत में भी, सबको प्राकृतिक चिकित्सा एवं अन्य प्रकार के उपचारों के बारे में जागरूक किया और औषधि रहित निरोग रहने के रास्ते दिखाए। विश्वविद्यालय के कुछ अन्य सहयोगियों ने भी प्रयोग किया जिससे लगभग सबको स्वास्थ्य लाभ हुआ। यहाँ तक कि एक महिला ने तो यह भी बताया कि उसका वर्षों पुराना कब्ज जाता रहा और उसके चेहरे की चमक के साथ त्वचा का लचीलापन वापस आ गया। यह सारे लाभ लोगों को मात्र 'उषापान' के नियमित उपयोग से हुए थे। कुछ दिनों बाद भैरव ने अपने जी.पी. को सब बताया। वह मानने को तैयार ही न था कि पेट ही सारी परेशानी की जड़ थी। जी.पी. ने कहाः

''भैरव, अब देखना यह होगा कि तुम्हारा आमाशय अधिक अम्ल न पैदा करे इसके लिए तुम्हे अम्लनाशक 'ओम्नीप्रोज़ाल' लेना होगा।'' जी.पी. ने अतः यह तो माना कि परेशानी की मूल में आमाशय का ज़रूरत से ज्यादा अम्ल उत्पादन था।

''जैसा आप उचित समझें। वैसे मैं इसके लिए प्राकृतिक उपायों को कर रहा हूँ।''

'ओम्नीप्रोज़ाल' भैरव के जीवन का अंग बन गया और वह ठीक रहने लगा। भैरव को कहाँ मालूम था कि, ज्वालामुखी की तरह, अंदर ही अंदर शरीर में क्या हो रहा है? और अब 15 साल बाद तनिक उदर दर्द और पेट खराब होने के कारण वह अपने जी.पी. के पास गया, और बताया कि वह अभी-अभी सुदूर पूर्वी देशों की लम्बी

यात्रा कर वापस आया है। चूंकि भैरव मधुमेह का पुराना रोगी भी था अतः जी.पी. ने कहाः

''पेट की खराबी तो हम तीन दिन में ठीक कर लेंगे। आप ब्लड टेस्ट भी जा कर करवा लें। दूसरे दिन जी.पी. का फोन आयाः

''क्या सुदूर यात्रा के समय आपके खान-पान और जीवन शैली में कोई विशेष अंतर हुआ था? आपका होमोग्लोबीन केवल 9 है जिसको 13-14 के मध्य होना चाहिए। आप ऐनीमिक हो गए हैं। पूरी खोज करवानी होगी कि शरीर में रक्त इतना कम कैसे हुआ ?''

''डॉक्टर, खान-पान आदि सब यथावत ही रहा है बल्कि सामान्य से कुछ ज्यादा ही तरह-तरह के व्यंजन खाता रहा तथा नए-नए फलों का सेवन भी किया।'' भैरव की आयु एवं उसके स्वास्थ्य इतिहास को ध्यान में रखते हुए जी.पी. ने अस्पताल को पत्र लिख दिया कि उसके सारे परीक्षण 'फास्ट ट्रैक' के अंतर्गत होने चाहिए। एक-एक करके टेस्ट नकरात्मक ही निकलते गए। भैरव राहत की सांस लेने का आदी बनता गया। तीन सप्ताह बाद पेट के निरीक्षण के लिए समय मिला। यह समय तो भौतिक घड़ी एवं कैलेंडर के अनुसार था जो सुविधानुसार बदल भी सकता है। जीवन की पुस्तक में हर चीज काल निर्धारित और अटल होती है जो मानवीय नियमों का पालन नहीं करती। भैरव के साथ भी ऐसा ही हुआ। निर्धारित तिथि के चार दिन पहले ही उसकी हालत इतनी बिगड़ी कि उसको एम्बुलेंस द्वारा आपात कालीन विभाग में पहुंचाया गया। वास्तव में वह बार-बार मूर्क्षित हो रहा था और सांसें भी असाधारण रूप सेले रहा था। अस्पताल पहुंचने पर पता लगाा कि भैरव का होमोग्लोबीन खतरे की सीमा से भी नीचे केवल 4.0 था। आपातकालीन वार्ड में सबको आश्चर्य हो रहा था कि इतने कम होमोग्लोबीन के होते हुए भैरव जिंदा कैसे रहा और लग भी रहा था कि वह ठीकठाक है। सबसे पहले एक के बाद एक करके उसे 4 यूनिट 'ओ पॉज़िटिव' रक्त दिया गया, बिना किसी शुल्क के। इसके बाद, रात होते-होते, उसे क्वी.ई.एच. के वार्ड नम्बर 512 में भेज दिया गया, निगरानी में रखने और यह पता लगाने के लिए कि भैरव के शरीर से इतना रक्त कैसे बाहर निकला। दूसरे ही दिन प्रातः यानी कि 20 जुलाई 2012 को, 11 बजे मुँह से कैमरा डाल कर, एन्डोसकोपी, पूरे आमाशय का निरीक्षण करने पर पता लगा कि 7 सेन्टीमीटर का अर्बुद (ट्यूमर) फूट चुका था और इसी के कारण इतने अधिक रक्त की क्षति हुई थी। इस निरीक्षण ने अर्बुद को कैंसर का नाम दिया और सी.टी.स्कैन एवं पेटस्कैन तुरंत कराने की सलाह दी। बायोप्सी के लिए नमूने को प्रयोगशाला भेज दिया। भैरव के घर एवं मित्रों के बीच चारों ओर चिंता का वातावरण छा गया। सी.

टी. स्कैन एवं पेटस्कैन ने एन्डोसकोपी के नतीजे को सही करार करते हुए यह खुलासा भी किया कि कैंसर के सेल कहीं और नहीं फैले हैं तथा अर्बुद का आकार 7 सेन्टीमीटर न होकर 11 10 7 सेन्टीमीटर था। इस रिपोर्ट ने डॉक्टर को चिंतित किया कि वह इतने बड़े अर्बुद का इलाज नहीं कर सकेंगे और उन्होंने निराशापूर्ण संकेत भी दिए। बायोप्सी के परिणाम से सबको राहत मिली कि अर्बुद को शल्यक्रिया द्वारा निकाला जा सकता है जिसको 'जिस्ट' का नाम दिया गया। लगभग 3 सप्ताह बाद आपरेशन की तिथि निर्धारित की गई। शरीर के विभिन्न आंतरिक क्षेत्रों के विशेषज्ञों की टीम एकत्रित करना आवश्यक था। जेनरल एनेस्थीसिया दिया गया। अर्बुद के साथ समूचा आमाशय भी काट कर निकाल दिया गया जिसको 'टोटलगैस्ट्रेक्टोमी' कहते हैं। छोटी आंत को ऊपर की ओर खींच कर खाने की नली से जोड़ पेट के स्थान पर एक ट्यूब ने जगह ले ली। इस प्रकार भैरव के शरीर में लगभग 2 लीटर घनत्व वाले पेट की जगह लगभग 200 मिली लीटर घनत्व वाले ट्यूबनुमा पेट ने ले ली। इसके अर्थ यह हुए कि भैरव के भोजन की मात्रा जो वह एक समय में ले सकता था पहले की अपेक्षा केवल दसवाँ हिस्सा ही रह गई। किंतु कम से कम जीवन की आशा तो बढ़ती नजर आई। शल्य चिकित्सा के दौरान तिल्ली (स्प्लीन) को भी जाना पड़ा क्योंकि अर्बुद को निकालने के लिए इसकी रक्त नलिका को भी काटना पड़ा था जो तिल्ली को जीवित रखती है। पूरे आपरेशन में 7 घंटे लगे और अधिक रक्त बह जाने के कारण कई यूनिट रक्त एवं रक्त के अन्य अवयवों को भैरव को दिया गया। आपरेटिंग थियेटर के अंदर सभी डॉक्टर व्यस्त थे भैरव को बचाने के लिए और बाहर उसकी पत्नी के साथ अन्य कई चिंतित लोग थे। सबके चेहरों पर चिंता ही चिंता थी क्योंकि इतना लम्बा समय तो हृदय के आपरेशन में भी नहीं लगता, सब यही कह रहे थे। भैरव के शरीर में तरह-तरह के पदार्थों को अंदर पहुंचाने और बाहर निकालने के लिए अनेकानेक ट्यूब लगे थे जब वह आपरेटिंग थियेटर से बाहर लाया गया था। सर्जन ने सबको बताया कि क्यों इतनी देर लगी और यह भी कि उन लोगों ने क्या-क्या किया तथा आने वाले 2-3 दिन खतरे से भरे रहेंगे। दर्द के अहसास को सीमित रखने के लिए मॉर्फीन का इंजेक्शन दिया गया था। भैरव को इंटेंसिव केयर यूनिट में भेज दिया गया। भैरव इस विभाग में 3 दिन रहा। भैरव ने बाद में इंटेंसिव केयर यूनिट में हुए अनुभव के बारे में सबको बताया कि उसको लगा कि वह आकाश मार्ग में उड़ रहा है और यह उड़ान उसको वहाँ ले गई जहाँ उसका साक्षात्कार दिवंगत माँ से हुआ। यह सब मॉर्फीन के इंजेक्शन के कारण हुआ था। दोनों के बीच काफी देर तक अनेकानेक विषयों पर बातें हुईं। जिस लोक में थीं उसके दृश्य दिखाने एवं विश्व के कई दिवंगत महत्वपूर्ण व्यक्तियों से परिचय कराने के बाद दिवंगत पिता

से भी बातें कराईं। उन सबको देख तो रहा था किंतु स्पर्श करने में असमर्थ। उसने यह भी बताया था कि माँ ने कहा है- ''बेटा! यह कैंसर तुम्हारे लिए मारक सिद्ध नहीं होगा। तुम शीघ्र ही ठीक हो कर घर वापस चले जाओगे।''

इंटेंसिव केयर यूनिट में कुछ दिन बिताने के बाद भैरव को पुनः वार्ड नम्बर 727 में भेज दिया गया। लगभग 10 दिन तक सारे ट्यूब लगे रहे जिनके ज़रिए कुछ ऊर्जादायक पदार्थ शरीर के अंदर जाता रहा और बाहर निकलने वाले सारे पदार्थ निकलते रहे। इस दौरान संदूष या संक्रमण (इनफेक्शन) का भय बना रहता है। आपरेशन के बाद छठे दिन से ही तेज़ बुखार रहने लगा। अल्ट्रासाउंड एवं सी.टी. स्कैन द्वारा पता लगा कि अग्न्याशय (पैंक्रियस) के आस-पास कुछ तरल पदार्थ एकत्रित हो गया है। सर्जन एवं अन्य चिकित्सक जानते-समझते थे कि इससे कृमिकोष (सिस्ट) बन सकता है जो बाद में द्वेषपूर्ण (मैलिगनेंट) हो सकता है। इस सिस्ट को शल्य क्रिया द्वारा निकाला जाता है। अगर सिस्ट नहीं बना है तो फिर एक मोटी सुई डाल कर सारे तरल पदार्थ बाहर निकाल लेते हैं। दुर्भाग्यवश भैरव के साथ यह सब सम्भव नहीं था क्योंकि पेट काट कर निकाला जा चुका था और कई ट्यूब भी लगे थे। अतः चिकित्सकों के पास केवल एक ही रास्ता था कि एकत्र हुए तरल पदार्थ को उपयुक्त औषधियों द्वारा सुखाया जाय। इस कारण सभी चिकित्सक डरे हुए थे कि अगर इस दौरान कहीं सिस्ट बन गया तो स्थिति काफी गम्भीर हो सकती थी। किंतु जैसा कहते हैं कि 'जाको राखे साइंया मार सके न कोय', भैरव की रक्षा के लिए विधाता के विशाल लम्बे हाथ उठ चुके थे। एक खास तरीके के प्रतिजीव (ऐन्टीबायोटिक) इंजेक्शन के माध्यम से इस तरल पदार्थ को सुखाने का असफल प्रयास किया गया। सर्जन की चिंता बढ़ गई। एक और ट्यूब डाल नहीं सकते थे जिसके ज़रिए इसे बाहर निकाला जा सके। दो तीन दवाएं बदली गईं, कोई असर न हुआ। बुखार कई दिन तक रहा। सब ओर चिंता का वातावरण था। स्वयं चिकित्सक होने के नाते बेटा जो यह सब समझता था कुछ ज्यादा ही चिंतित था। इसी लिए कहा गया है कि कभी-कभी अज्ञानता भी लाभप्रद सिद्ध हो जाती है। यू. के. के संदूषणविशेषज्ञों से बात करने के बाद बदली गई औषधियों के कारण लगभग एक सप्ताह बाद ज्वर कम होने लगा। सबने राहत ही सांस ली। ड्यूटी बदलने पर वार्ड के एक विशेषज्ञ ने, बिना स्थिति का ठीक से आकलन किए, भैरव को घर जाने के आदेश जारी कर दिए। आपरेशन के बाद बीसवें दिन भैरव घर आ गया। सारे सम्बंधियों ने अनजाने में राहत की सांस ली। किंतु सर्जन नाराज़ था कि ऐसी जल्दबाजी क्यों की गई। घर पर केवल एक दिन के बाद ही स्थिति बिगड़ी और भैरव उसी वार्ड में फिर से पहुंचा दिया गया। ऊर्जादायक ट्यूब लगा रहा। किसी प्रकार

स्थिति पर नियंत्रण किया गया। तीसवें दिन भैरव को भौतिक चिकित्सक (फीज़ियोथेरेपिस्ट) के निरीक्षण में पुनः समतल जमीन एवं जीने पर ऊपर-नीचे जाने की कला सिखाई जाने लगी। तीन-चार दिन तक भैरव एक फ्रेम के सहारे वार्ड में ही चलता रहा। कभी-कभी वह अपने दोनों पांवों पर भी चलता रहा किंतु उसके साथ एक नर्स भी चलती रही, आवश्यकता पड़ने पर सहारा देने के लिए। अब तक लगभग सारी बातें सामान्य हो गई थीं। शरीर का भार 73 किलोग्राम से घटकर 58 किलोग्राम हो गया था। इस दौरान एक अप्रत्याशित लाभ यह हुआ कि भैरव की मधुमेह (डाइअबेटिक) की शिकायत जाती रही। ऊर्जादायक ट्यूब लगा रहा। किस प्रकार खाने के थैले आदि को बदलना चाहिए, इसकी विधि समझाने के बाद, आपरेशन के छत्तीसवें दिन भैरव को वार्ड से मुक्ति मिली। घर जाने की अनुमति मिली। लोगों को ऐसा लगने लगा कि भैरव की इच्छाशक्ति ने जीवन का यह बहुत बड़ा युद्ध जीत ही लिया।

वर्तमान कल्प के 28वें महायुग के द्वापर में हुआ महाभारत का युद्ध कौरव-पांडवों के बीच 18 दिन तक चला था जिसमें असंख्य लोग मारे गए थे केवल आपसी द्वेष एवं कौरवों की महत्वाकांक्षी सोच के कारण। भारतीय इतिहास की यह सबसे अधिक भयंकर घटना बन कर रह गई। किंतु यहाँ तो भैरव ने अकेले ही अपने जीवन के निर्णायक युद्ध से पूरे 36 दिन तक लड़ने के बाद विजय पाई और वह भी केवल अपना रक्त बहाकर। इस दौरान 36 दिन के लिए न्यू क्यू. ई. एच. का वार्ड नम्बर 727 भैरव का अपना घर बन गया था।

॥

;g dlk yuk&nuk

लीमा एयरपोर्ट छोड़ते समय सिलविया की आँखों में आँसू एवं चेहरे पर उल्लास था। उसके दोनों बच्चों को यह भी पता नहीं था कि उनको माँ कब मिलेगी। जॉन, जो कभी पेरू की मैराथन दौड़ में भाग लेता था, अब व्हीलचेयर से उठने लायक भी नहीं। सिलविया का बड़ा भाई विलियम उसको, बच्चों एवं जॉन को अपनी कार में एयरपोर्ट ले कर आया था। सिलविया को विलियम का ही सहारा था अन्यथा वह पेरू छोड़ने का सपना भी न देखती।

सिलविया को अपने पति एवं बच्चों को पेरू में छोड़ कर रेडिच में रहते हुए एक माह हो चुका था किन्तु उसको अपनी पढ़ाई एवं अनुभव के अनुकूल नौकरी नहीं मिल पाई थी। उसने सोचा था कि शीघ्र ही वह इतना पैसा कमा लेगी कि परिवार एवं बच्चों का भविष्य सुधर जाएगा और वह अपने देश वापस चली जाएगी। ऐसी भ्रांतियों के बीज सब बोते रहते हैं अपने-अपने विचारों की उर्वरा भूमि में जो समय के साथ-साथ बढ़कर एक विशालकाय वृक्ष का रूप धारण कर लेता है और ज़िन्दगी एक टेढ़ी खीर बन कर रह जाती है। उसने अखबारों में पढ़ रखा था कि यू.के. में अनुभवी नर्सों की बड़ी जरूरत है इसी कारण उसने ऐसा निर्णय लिया था। औसतन पेरू की तुलना में यू.के. में नर्सों को चार गुना वेतन मिलता है, यह भी उसने इन्टरनेट के माध्यम से पता लगा लिया था। ममता और मोह सब कुछ करवा लेता है। घर का खर्चा चलाने के लिए उसने बर्मिंघम के एक नर्सिंग होम में केएर असिस्टेंट की नौकरी ले ली और रोज़ 8 की जगह 12 घंटे काम करने लगी। माह के अन्त में पहली तनख्वाह मिलते ही उसने आधे से ज्यादा पैसे अपने पति जॉन को भेज दिए।

सिलविया ने छोटा सा, एक कमरे का, फ्लैट किराए पर ले रखा था। घर पहुँचते-पहुँचते उसके शरीर में जान नहीं रह जाती और वह निढाल होकर बिस्तर में लेट कर यदा-कदा अपनी किस्मत को कोसा करती। बच्चों एवं जॉन को याद कर रोती रहती। फ़ोन पर वह अपनी हालत का बयान नहीं करती जबकि जॉन बराबर उसको वापस आने के लिए कहता और समझाता- “हम कम पैसों में गुज़ारा करते रहे हैं और आगे भी कर लेंगे, सिलविया तुम हठ छोड़ कर बच्चों की खातिर वापस आ जाओ।” किन्तु सिलविया को हठ नहीं बच्चों की पढ़ाई और उनके भविष्य को

सुधारने का ध्यान था जो हर माँ चाहती है। इसके लिए उतने पैसों की ज़रूरत थी जिनका प्रबंध पेरू में काम कर नहीं हो सकता था, यह वह अच्छी तरह जानती थी। अगर बच्चों की ठीक पढ़ाई नहीं हो पाती है तो वह जानती थी कि उसके बच्चे भी शहर की गलियों में ड्रग बेचते या चोरी करते जीवन बिता देंगे। सिलविया यह कदापि नहीं चाहती थी। जॉन और सिलविया की सोच में बड़ा अन्तर था। जो अक्सर होता ही है। सिलविया अतीत को स्मृतियों में सहेज भविष्य को वर्तमान में रख कर जीती थी जबकि जॉन वर्तमान को भी ठीक से जीने में असमर्थ हो गया था क्योंकि बदलते हुए हालात ने धीरे-धीरे जॉन की सोच बदल दी थी। परिस्थितियों ने उसकी कमर ही तोड़ दी थी किन्तु इन्हीं बदलते हुए हालात ने सिलविया की संकल्प शक्ति को और अधिक ऊर्जा प्रदान की थी। अच्छे और सच्चे पति-पत्नी के रिश्तों में यह अक्सर होता है किन्तु यह कैसी विडम्बना है।

जॉन की दुर्घटना के बाद सिलविया ने पेरू वाले घर को ऐसा बनवा लिया था कि जॉन व्हीलचेयर से ही अपना सारा काम कर सकता था। उसका बिस्तर भी ऐसा था कि व्हीलचेयर से ही वह अन्दर-बाहर आ जा सकता था। मैरी 9 वर्ष की हो चुकी थी जबकि डेविड तो केवल 4 वर्ष का ही था। दोनों अन्य बच्चों की तरह अपने-अपने स्कूल स्वयं चले जाते। मैरी कभी-कभी अपने डैडी से माँ के बारे में पूछती रहती। जॉन का सारा समय व्हीलचेयर पर कम्प्यूटर के सामने ही बीतता। घर बैठ कर वह लोगों के लिए काम करके कुछ आमदनी कर लेता। घर उसको विरासत में मिल गया था।

दक्षिण अमेरिका का तीसरा सबसे बड़ा देश पेरू इंका संस्कृति और यहाँ पाई गई पांडुलिपि के कारण सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हो ही चुका था अतः सिलविया को अधिक परेशानी नहीं होती थी मिडलैंड्स में अपनी पहचान बनाने में। लोग अक्सर कुस्को एवं माचू पिछू जैसे शहरों के बारे में भी पूछते रहते जिसकी चर्चा इंका संस्कृति से जुड़ी हुई है। इंका का शाब्दिक अर्थ है 'नृप या राजा'। सोलहवीं शताब्दी में स्पैनिश आतताइयों ने इंका संस्कृति एवं सभ्यता को नष्ट कर दिया था। नर्सिंग होम में जगह-जगह से भिन्न-भिन्न देशों के विभिन्न मतों के लोग आया करते थे और इसी कारण से सिलविया को यहाँ नौकरी भी मिली थी। होम के डॉक्टर पीटर स्कॉट को पढ़ने-लिखने का बड़ा शौक था। एक दिन लंच टाइम में सिलविया एवं पीटर दोनों के पास थोड़ा खाली समय था। सिलविया देखने में बहुत आकर्षक तो थी ही। साथ बैठते ही बाहर लॉन में दोनों में तरह-तरह की बातें होने लगीं। पीटर ने इंका संस्कृति से जुड़ी अनेक बातों के बारे में सूचना ली तो सिलविया ने यू.के. के बारे में। अचानक दोनों की निगाह अख़बार की एक खबर पर पड़ी जिसमें एक बारह वर्षीया अविवाहिता

कन्या के 8 पौंड के एक लड़के के जन्म देने की बातें छपी थीं। पीटर ने सिलविया से बड़ी आकुलता से कहा- 'पेरू के दामन में विश्व रेकॉर्ड का एक अजीबोग़रीब पदक टँगा है, क्या आप इस विषय में कुछ जानती हैं?'। सिलविया ने बड़ी ही बेचैनी से पूछा- 'आप कुछ खुलासा तो करें कि इस तमगे का संबंध...?'। पीटर ने सिलविया के चेहरे की ओर देखते हुए आँखों की आतुरता का आकलन कर पूछा- "हैव यू हर्ड अबाउट लीना मेडीना?"। सिलविया ने बड़ी ही तत्परता से तपाक से उत्तर दिया- ''क्यों नहीं, वही न जिसने पाँच वर्ष सात माह की आयु में ही 14 मई 1939 को एक छह पाउण्ड के लड़के को जन्म दिया था। शायद आपको मालूम न हो लीना के इस बेटे जेरारडो की 1979 में मृत्यु हो गई थी किन्तु उसका दूसरा बेटा जिसका जन्म 1972 में हुआ था ज़िंदा है तथा मेक्सिको में रह रहा है।'' पीटर ने धन्यवाद देते हुए आश्चर्य से कहा कि यह सब कैसे सम्भव हुआ था, अब तक हम डॉक्टरों के लिए यह घटना एक समस्या ही बनी है। सब इसको एक विलक्षण घटना मान कर अपने आप को समझाते रहे हैं। इतने में एक नर्स ने आकर डॉ. पीटर से कहा कि रूम नम्बर 3 के मरीज़ को काफ़ी देर से हिचकियाँ आ रही हैं और वह अब घबराने लगा है। एक झटके से पीटर उठ कर उस नर्स के साथ चल दिया।

यह पहला क्रिसमस था जब सिलविया परिवार से दूर अकेली रह रही थी। बाहर खूब धूम-धाम एवं उत्साह का वातावरण था किन्तु सिलविया के अन्दर केवल अकेलापन एवं उदासी ही थी। दूर दराज़ लोगों के घरों पर अब क्रिसमस की सजावट एवं झिलमिलाती छोटी-छोटी बत्तियों की चमक उसको अच्छी किन्तु डरावनी-सी लगती थी। चारों ओर बर्फ़ ही बर्फ़ नज़र आ रही थी और मकानों की चोटियों ने स्नो की सफ़ेद टोपियाँ ऐसे पहन रखी थी जैसे कि प्रकृति की सुन्दरी ने स्वयं ताज़पोशी की हो। रात के अँधेरे में चन्द्रमा की किरणों से चमकती पहाड़ियों की यह छवि बड़ी ही चित्ताकर्षक थी। किन्तु सिलविया को वही नज़ारा डरावना लग रहा था क्योंकि उसके मन-मानस में भय का ज़हर भर चुका था। यह डर कि वह अब अपने स्वप्न को साकार न कर सकेगी और असफल, निराश, हताश और समय के आगे नियति को स्वीकार करते हुए पेरू वापस जाना पड़ेगा। सिलविया ने अपने 6 माह के यू. के. प्रवास में कोई सही मित्र भी नहीं बनाया था क्योंकि वह यहाँ के लोगों के उदासीन एवं स्वार्थी प्रवृति से अवगत थी।

उसने डॉ. पीटर के सामने अपना दिल खोलने का निश्चय कर लिया था क्योंकि उसके अंदर सिलविया ने मानवीय चेतना की झलक उस दिन लंच टाइम में देखी थी। दूसरे दिन समय से पहले ही वह अपनी प्रिय ड्रेस को पहन कर निर्धारित समय से आधा घंटा पहले ही नर्सिंग होम में पहुँच गई थी। डॉ. पीटर स्वागत कक्ष

में उसकी ही प्रतीक्षा कर रहा था। सिलविया को सामने आते देख कर आगे बढ़ते हुए कहा- "गुड मॉर्निंग सिलविया।" सिलविया ने अपने आप को तनिक सँभालते हुए कहा- "गुड मॉर्निंग सर।" डॉ. पीटर ने उसको कॉफ़ी का निमंत्रण दिया और दोनों पलक मारते ही कॉफ़ी लाउंज में कॉफ़ी का मज़ा ले रहे थे। ख़ामोशी को तोड़ते हुए डॉ. पीटर ने पूछा- "सिलविया हाउ इज़ योर हस्बेंड ऐण्ड आई होप योर चिल्ड्रेन आर नॉट मिसिंग यू टू मच।" अनायास सुबह-सुबह सिलविया की आँखों से बह निकले आँसुओं ने सब उत्तर दे ही दिया। "ओह! नो, आई डिड नॉट मीन टु अपसेट यू, आई ऐम सॉरी सिलविया। जब तुम आई थी तब तुमने शायद अनजाने में इशारा किया था कि तुम यहाँ क्यों आई हो? इस नौकरी से तुम्हारा वह स्वप्न तो साकार नहीं होगा, यह तुम भी अब तक जान गई होगी।'' ''सर व्हाट ए क्वेन्सेडेन्स। इसी बारे में मैं आपसे मिलने के लिए इतनी जल्दी आई हूँ। मुझे याद भी नहीं कि मैंने कब इस बारे में आपसे चर्चा की थी।''

अपने भावावेश को थोड़ा संतुलित करते हुए सिलविया ने पूछा- "सर... सर... तो फिर आप ही मेरी मदद करें कि मैं कैसे अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकती हूँ? मैं अपने बच्चों एवं जॉन के लिए कुछ भी करने को तैयार हूँ। कोई भी काम न छोटा होता है न बड़ा। काम सिर्फ काम होता है। मैं आपसे छोटी हूँ और आजीवन आभारी रहूँगी इस उपकार के लिए।" कुछ संकोच करते हुए डॉ. स्कॉट ने फियोना टर्टल की एक छोटी सी विज्ञप्ति जो कल ही अखबार में छपी थी, सिलविया के हाथों में देते हुए कहा- "पढ़ कर बताओ तुम्हारा क्या विचार है, कुछ ऐसा करने के बारे में?"

डॉ. स्कॉट की बातें सुन कर सिलविया की आँखें हिरन की आँखों की तरह चमकने तथा चेहरे पर आशा की किरणें झलकने लगीं। सिलविया ने एक ही स्वांस में पूरी विज्ञप्ति पढ़ ली। किन्तु कुछ भ्रमित मनोदशा के साथ पूछा- "सर मैं समझी नहीं 'वुम्ब् फार रेन्ट' का क्या मतलब है और इससे मेरी समस्या कैसे हल हो सकती है?" सिलविया के इस प्रश्न का खुलासा करते हुए डॉ. स्कॉट ने समझाया- "कि यदि तुम अपनी कोख को किसी औरत को किराये पर बच्चे के जन्म के लिए दे सकती हो तो वह औरत तुम्हारी इस सेवा के लिए 20 से 25 हज़ार पाउंड तक दे सकती है। तुम्हारी कोख में उस औरत का बच्चा बड़ा होगा और जन्म के उपरान्त बच्चा उस औरत का हो जाएगा। यह काम तुम पेरू में रह कर भी कर सकती हो। इस अवधि में होने वाले बच्चे के माँ-बाप भी अपने खर्चे पर पेरू में रह सकते हैं। और तुम अपने परिवार के साथ रह कर जो चाहो कर भी सकती हो। इस धनराशि के अलावा तुमको एक वर्ष का समुचित वेतन भी मिल सकता है। इस प्रकार तुम किसी

दूसरे की मदद करोगी और साथ एक साल में ही 35-40 हज़ार पाउंड भी बना सकती हो।"

योजना सुन कर सिलविया की सोच के तार झनझनाने लगे और माथा चकराने लगा। यह कैसा संसार हो गया है...! उसको यह योजना अच्छी लगी किन्तु मन ही मन में विचार करने लगी कि जॉन क्या सोचेगा, उसके बच्चे क्या सोचेंगे, वगैरह वगैरह। उधर डॉ. स्कॉट बड़ी आतुर निगाहों से टकटकी बांधे सिलविया का चेहरा निहारता रहा कि कहीं वह इन्कार न कर दे। लिज़ की गोद में बच्चा डालने का बस एक यही उपाय था। स्पेन के डाक्टरों ने लिज़-पीटर को यही सलाह दी थी। इन दोनों के पास धन था किन्तु लिज़ की कोख में बच्चा रोकने की सामर्थ्य नहीं थी। स्कॉट खामोशी को बेज़ुबान ही रहने देना चाह रहा था एक अनजाने सम्भावित भय के कारण। सिलविया भी सम्भावित पेचीदियों के बारे में सोच कर परेशान थी। ना करने की परिस्थिति में वह थी नहीं और 'हाँ' कर भी नहीं पा रही थी। विचारों के भ्रमजाल में वह उलझती ही जा रही थी कि एकदम उसने अपने सिर को झटकते हुए कहा- "तो आप मुझसे क्या चाहते हैं डॉक्टर स्कॉट? यह सब कैसे सम्भव हो सकता है। जॉन... बच्चे... लोग...? कहाँ से मिलेगा ऐसा कॅपल? मेरा तो सिर फटा जा रहा है।" डॉक्टर स्कॉट ने यह कह कर बात टाल दी कि- "सिलविया तुम इस विषय पर गम्भीरता से सोच लो और चाहो तो जॉन से भी बात कर लो। हम कल फिर बात कर सकते हैं।" इतना कह कर डॉ. स्कॉट उठ कर चल दिया। और सिलविया विचारों के बवंडर में सूखे पत्ते की तरह फड़फड़ाती रही।

ई.मेल देखने के लिए सिलविया ने अपने दफ्तर में जाकर कम्प्यूटर ऑन किया। जॉन ने अखबार की एक खबर स्कैन करके इसी विषय पर सिलविया के लिए भेजी थी। और ऐसी अभागी महिलाओं के बारे में अपने विचार व्यक्त किए थे। तुरन्त ही सिलविया ने जॉन को फ़ोन मिलाया और हृदय को टटोलते हुए उसके मानसिक विज्ञान का आकलन किया। जॉन से बात करने के बाद उसकी उलझनें कुछ कम हुईं और निश्चय कर लिया कि वह लंचटाइम में डॉ. स्कॉट से इस बारे में चर्चा फिर से करेगी।

डॉ. स्कॉट ने लिज़ को क्रिसमस का सबसे बड़ा गिफ्ट आखिरकार दे ही दिया। लिज़ अपने पति से लिपट कर खूब रोई सारी कहानी के पता लगने पर। क्रिसमस वाले दिन सिलविया लिज़ के घर मुख्य अतिथि के रूप में आई और योजना की पूरी रूपरेखा बन गई कि कब क्या और कैसे होगा।

नए वर्ष के आगाज़ से सिलविया, लिज़-स्कॉट और दोनों परिवारों के नए जीवन का आगाज़ भी हो रहा था। पांच जनवरी को डॉ. स्कॉट के सॉलीसिटर के दफ्तर में

जाकर पूरा कॉन्ट्रैक्ट बन गया और सॉलीसिटर के माध्यम से निर्धारित धनराशि के आधे, 30 हजार पाउन्ड, का चेक सिलविया को दे दिया गया। 10 जनवरी को तीनों मैड्रिड में डॉ. जोसेफ की फर्टिलिटी क्लीनिक में थे। और बिना किसी झंझट या अड़चन के लिज़-स्कॉट का होने वाला बच्चा सिलविया की कोख में पलने लगा। सबके सब प्रसन्न थे, निःसन्देह सिलविया डॉ. स्कॉट का एहसान मानती थी किन्तु लिज़ तो अब सिलविया के उपकार के बोझ के नीचे दब चुकी थी। पैसों की खुशी और बच्चों के भविष्य के सामने वह प्रसव की लम्बी अवधि में होने वाली पीड़ाओं को याद भी नहीं करना चाहती थी।

समाज में दिखाने के लिए कि लिज़ गर्भवती हो गई है उसने सबको बताना प्रारम्भ कर दिया। निकटतम परिचितों ने तरह-तरह की सलाहों से लिज़ का दामन भरना शुरू कर दिया और वह भी एक कुशल कलाकार की तरह सारी और सबकी बातें बड़े ही ध्यान से सुनती रही। काम का बहाना बना कर लिज़ सिलविया के साथ पेरू पहुँच गई। पहुँचते ही सिलविया ने सारी बातों के बारे में बताते हुए जॉन के हाथों में डॉ. जोसेफ की क्लीनिक से प्राप्त सारे कागज़ात और सॉलीसिटर से मिले अनुबंध को रख दिया। जॉन तो पहले नाराज़ हुआ किन्तु सब कुछ ठीक से समझने के बाद सिलविया की पहले से भी ज्यादा पूजा करने लगा।

पूर्व अनुभव के कारण लिज़ को स्थानीय विद्यालय में अंग्रेजी पढ़ाने की अच्छी नौकरी तुरन्त ही मिल गई और वह जॉन-सिलविया के घर पर ही एक पेइंग गेस्ट की तरह रहने लगी। इस सेवा के लिए सिलविया को अतिरिक्त पैसे मिलने की बात भी हो गई। सिलविया ने लिज़ के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, आखिरकार यह सारा धंधा पैसों के लिए ही तो किया जा रहा था।

डॉ. स्कॉट पूर्ववत नर्सिंग होम में काम करता रहा। ईस्टर की छुट्टियों में वह भी पेरू अपनी पत्नी के पास पहुँच गया। दोनों ने मिलकर इंका सभ्यता के भग्नावशेषों को खूब देखा। डॉ. स्कॉट लीना मेडीना से मिलने भी गया किन्तु पुरानी समस्या का कोई समाधान न हो सका क्योंकि लीना को मालूम ही नहीं था कि वह पहली बार क्यों और कैसे गर्भवती हुई थी। हो सकता है लीना के जन्म के समय के भ्रूण का एक अंश बचा रह गया था जो धीरे-धीरे लीना की कोख में लीना के साथ-साथ पलता रहा हो। सुनने में आया है कि ऐसा हो सकता है।

अनुबंध के अनुसार बच्चे के जन्म से छह सप्ताह पहले सिलविया को एक अच्छे मेटर्निटी होम में दाखिल करवा दिया गया और लिज़ दो सप्ताह के लिए बर्मिंघम वापस आ गई। कृत्रिम तरीके से लिज़ ने अपने पेट के साथ कुछ ऐसा किया जिससे कि वह गर्भवती लगे। अपने को और दूसरों को मानसिकरूप से तैयार करने

के लिए उसने अपनी पोशाक भी बदल ली थी। दुबली-पतली लिज़ के शरीर पर जहाँ पहले तंग कपड़े ही सजते थे वहीं पर अब ढीले-ढाले कपड़े लटकने लगे। घर को आने वाले बच्चे के लिए ठीक किया गया। एक सुन्दर सी बेबीकॉट आ गई तथा कमरे का वालपेपर भी बदल दिया गया। कमरे में बच्चे की आवाज़ को अपने कमरे में सुनने के लिए एक इन्टरकॉम भी लग गया। वीडियो देख-देख कर अपनी गोद में बच्चे की देख-रेख की क्रिया भी सीखती गई। यह सब देख कर पीटर स्कॉट भी प्रसन्न था। दो सप्ताह बाद लिज़ वापस चली गई। सिलविया का रोज़ाना चेकअप होता रहा। मैरी, डेविड और जॉन एक नियम की तरह रोज़ सिलविया से मिलने के लिए आते रहे। जॉन सिलविया के चेहरे की अनकही मुस्कान को देख-देख कर आनन्दित होता रहता। बच्चे सारी वास्तविकता से अनभिज्ञ थे।

लिज़ जबसे पेरू वापस आई तबसे उसका मन अन्दर ही अन्दर से घबड़ाता रहता और किसी काम में वह मन नहीं लगा पा रही थी। उसकी स्वाभाविक चुलबुलाहट गायब सी हो गई थी और सिलविया के कमरे में वह आगे-पीछे चक्कर लगाती रहती। लगता है परिन्दों की तरह लिज़ को भी आने वाले तूफ़ान की अग्रिम सूचना मिल गई थी। अन्तर सिर्फ इतना था कि लिज़ पूर्णतया अनभिज्ञ थी कि क्या होने वाला है। डेलिवरी से तीन सप्ताह पहले सिलविया का रक्तचाप कॉफी बढ़ गया। दो-तीन दिन तक दवाएं दी गईं किन्तु कोई राहत न मिली। लिज़ ने कुछ चिन्तित हो पीटर को फ़ोन कर इसकी सूचना दी। पीटर ने कहा- "यह खतरे की घंटी है, इस स्थिति को टाक्सीमिया कहते हैं, बहुत सावधानी बरतने की ज़रूरत है अन्यथा बच्चे की मौत हो सकती है। ऐसी हालत में क्या करना उचित होगा यह भी पीटर ने लिज़ को समझाया।" उधर होम के डॉक्टर ने निर्णय ले लिया था कि बच्चे को बचाने के लिए सीज़ैरियन करना होगा। सब जानते थे कि स्थिति गम्भीर हो सकती है। डॉक्टर की सलाह पर सिलविया तुरन्त तैयार हो गई परन्तु जॉन को समझाना पड़ा था। डेलीवरी की निर्धारित तिथि से दस दिन पहले, 28 सितम्बर को, सिलविया ने जॉन और लिज़ की उपस्थिति में सुन्दर स्वस्थ्य लड़के को जन्म दिया। बच्चे की आवाज़ सुनकर सबने राहत की सांस ली। बच्चे को साफ़ सुथरा करने के बाद सिलविया के कहने पर नर्स ने बच्चे को लिज़ की गोद में डाल दिया। सिलविया ने बस इतना ही कहा- "लिज़ लो अपनी अमानत, इसे सँभाल कर रखना। मैंने तुमको कभी बताया नहीं इस बार मुझे ज़रूरत से ज्यादा परेशानी हुई है इस बच्चे को जन्म देने में। इससे मुझको भी लगाव हो गया है यद्यपि मैं जानती हूँ कि यह बच्चा हमारा नहीं है, तुमने मुझको अच्छे खासे पैसे दिए हैं जिससे मेरे परिवार का भला होगा। हो सके तो इसके पहले जन्मदिन पर मुझको बुलाना ज़रूर।" लिज़ की आँखों में आँसू आ गए और

उसने बच्चे को सिलविया की ओर बढ़ा कर उसके माथे पर एक चुम्बन दिलवाया। सिलविया का स्पर्श पाते ही बच्चे ने अपने हाथ-पाँव डुलाए।

मौका मिलते ही लिज़ ने पीटर को फ़ोन किया। पीटर ने राहत की स्वांस ली क्योंकि वह जानता था कि स्थिति बड़ी ही नाजुक हो गई थी। वह तीसरे ही दिन दो सप्ताह की छुट्टी लेकर लिज़ के पास पहुँच गया। बच्चे का जन्म सर्टिफिकेट बन गया जिसमें पीटर स्कॉट एवं लिज़ स्कॉट का नाम पिता-माता के स्थान पर अंकित था। सिलविया अब दृश्य से ग़ायब हो रही थी क्योंकि उसने अपना काम पूरा कर दिया था। लिज़ ने धीरे-धीरे बच्चे की देख-रेख के बारे में सब समझ लिया। दोनों ने मैटिर्निटी होम के सभी कर्मचारियों को धन्यवाद और उपहार दिया, ठीक उसी प्रकार जैसे श्रीराम जी ने रावण पर विजय उपरान्त वानर सेना के एक-एक सिपाही के साथ किया था। ठीक दस दिन बाद सिलविया को घर भेज दिया गया।

पीटर की सलाह से लिज़ ने अब तक अनाम बच्चे को सिजा पीटर स्कॉट का नाम दिया। लिज़ ने सिलविया और जॉन के नाम को अपने परिवार के साथ सदा के लिए जोड़ दिया था। सिलविया ने लिज़ को गले लगा कर सिजा को प्यार किया। पीटर-लिज़-सिजा के पेरू छोड़ने का समय आ गया। एयरपोर्ट जाने के लिए टैक्सी आ चुकी थी। सिलविया बाकी धनराशि के बारे में अपने मन में सोच ही रही थी कि पीटर ने जॉन और सिलविया की ओर सम्बोधित करते हुए कहाः

“हम दोनों आपके आभारी हैं, जो आपने किया वह कोई नहीं करता। अब लगता है कि सिलविया को ईश्वर ने मेरे नर्सिंग होम में सिर्फ़ इसी काम के लिए ही भेजा था। वास्तव में सिलविया की नियुक्ति के समय ही यह विचार मेरे दिमाग़ में आया था, जिसके बारे में मैंने लिज़ से कहा भी था। किन्तु मुझे क्या मालूम था कि सपने इस प्रकार साकार भी हो सकते हैं। मेरे लिए आप दोनों ईश्वर समान हैं अन्यथा लिज़ का जीवन अधूरा ही रह जाता.।

जॉन ने छूटते ही कहा- “मेरी सिल...। वह तो बूढ़ी हो गई है किन्तु बड़ी खुश है क्योंकि...। सिल वास्तव में देवी ही है अन्यथा पेरू की किसी और औरत ने तो मुझ जैसे अपाहिज को कब का छोड़ दिया होता। यू.के. की महिला क्या करती मैं नहीं जानता।”

जॉन अभी और कुछ कहने वाला था कि सिलविया ने बीच में ही टोकते हुए कहाः

“सर अगर आपने मुझे रास्ता न दिखाया होता तो मैं बिल्कुल टूट जाती, मेरा सपना...। मेरे बच्चे गली की...। जॉन दोबारा अपने पांवों पर खड़ा न हो पाता क्योंकि मेरे पास आपरेशन के लिए उतने पैसे नहीं थे। भविष्य में मेरे लायक कोई सेवा हो

तो ज़रूर याद करियेगा। और यदि लिज़ को अपने और समाज के लिए एक बच्चा और चाहिए तो मैं यही काम दोबारा कर सकती हूँ किन्तु इस बार मेरी कोख किराए पर नहीं मिलेगी वह आप दोनों की अपनी होगी।”

पहली बार पीटर ने सिलविया को गले लगाया और दो आंसू टपका कर अपनी भावनाओं को व्यक्त कर दिया। घड़ी की सुई बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ रही थी। पीटर ने सिलविया के हाथों में 30 हज़ार पाउंड का चेक देते हुए कहाः

“सिलविया अपने अनुबंध के अनुसार यह रही बाकी रकम तुमने हमको सुन्दर सिजा दिया है और साथ में दोस्ती का अपना हाथ भी।” और फिर अपने दूसरे जेब से 10 हज़ार पाउंड की एक और चेक निकाल कर जॉन को देते हुए कहाः

“जॉन! अनुबंध केवल साधारण डेलिवरी के लिए था किन्तु सिजा को बचाने के लिए सिज़ेरियन करना पड़ा जिसके कारण सिलविया को और अधिक तकलीफ़ हुई। यह धनराशि इसके ऐवज़ में है। तुम दोनों को इसकी ज़रूरत पड़ सकती है। सिजा के पहले जन्मदिन पर आप मेरे मेहमान बन कर आएंगे और जॉन तुमको अपने पैरो पर चल कर आना होगा। यह सब हम लोगों की तरफ से एक छोटा सा गिफ्ट होगा। गिफ्ट केवल स्वीकार किया जाता है। तुम सबका धन्यवाद मैं भी स्वीकार करता हूँ। कोख किराए पर तो मिल गई किन्तु कोख के बहाने मिली मानवता कब बाजार में मिलती है जो हम दोनों को मिली।”

सब एक दूसरे से गले मिल कर बिछुड़ गए। टैक्सी चल पड़ी जॉन के आँसू बहुत दिनों बाद गिरे थे। वह सिलविया से लिपट गया।

॥

og vkj o

दाम्पत्य जीवन का सुख-दुःख, धूप-छाँह, ऊँच-नीच, सर्दी-गर्मी, मिलन विछोह और प्रेम-घृणा का स्वाद दोनों ने पहले भी चखा था। सब कुछ समझने के बाद चेतन एवं सोनम ने इस संबंध को स्वीकारा था। कुछ समय पश्चात दोनों पहले छोटी-छोटी बातों को लेकर झगड़ते रहे और अब तीन साल की प्यारी बच्ची को लेकर। चेतन कभी चाहता ही नहीं था कि वह बाहर की चकाचौंध एवं प्रकाश को देखे। यह पता लगने के बाद एक जिंदगी उसकी कोख में पनप रही है, चेतन के विचारों के कारण वह बराबर चिंताग्रस्त रहने लगी, ऊहापोह उसकी सोच का अभिन्न अंग बन गया। तमाम विरोधों के बाद सोनम ने इस बच्ची को जन्म दिया था। यह झगड़ा दिन प्रतिदिन होता रहता जब से कोर्ट ने रख रखाव एवं देखभाल का दायित्व सोनम को दे दिया और चेतन पांव पटकते हुए कोर्ट से बाहर आया था। कोर्ट द्वारा बच्ची का रखरखाव का दायित्व सोनम को न मिले इसके लिए चेतन ने हर कोशिश कर ली यह स्थापित करने की कि सोनम का मानसिक संतुलन ठीक नहीं है।

सोनम ने अपने तलाकशुदा पति के घिनौने व्यक्तित्व को पूरी तरह से समझ चुकने के बाद भी कांटों से भरी राह पर चलना स्वीकार किया। वह यूके में निपट अकेली थी। यह जानते हुए भी उसके लिए ज़ारा को पाल-पोशकर बड़ा करना आसान न होगा सोनम ने जीवन में इस चुनौती को स्वीकारा, क्योंकि वह यह नहीं चाहती थी कि मासूम बच्ची शराब एवं सिगरेट के वातावरण में अपना दम घोटती रहे। और वह बी.बी.सी. दूरदर्शन के ख्याति प्राप्त प्रस्तुतिकर्ता रॉय कासल की तरह पैसिव स्मोकिंग का शिकार बन घुट-घुट कर मरे। सोनम पिसती रही। चेतन ने भी यह जिद्द पकड़ ली थी कि वह सोनम को चैन से नहीं बैठने देगा।

सोनम और चेतन की रस्साकसी में ज़ारा मानसिक रूप से पिसती रही। इस बात की ओर दोनों में से किसी का ध्यान नहीं गया कि मासूम बच्ची को वास्तव में क्या चाहिए। अपनी युवा अवस्था तक चेतन का समय ईस्ट अफ्रीका में तथा सोनम का भारत में बीता था। इस कारण चेतन शुरू से ही सोनम को हीन दृष्टि से देखता रहा। अफ्रीका में रहकर आए भारतीय अपने आप को सीधे भारत से यूके आये भारतीयों की अपेक्षा बेहतर समझते रहे। चेनत-सोनम की सोच में सांस्कृतिक

टकराव का होना स्वभाविक था। सोनम के काम करने का ढंग चेतन को कभी पसंद नहीं आया। सोनम घर को सुव्यवस्थित रखना चाहती। घर को साफ-सुथरा सजा कर रखना चाहती थी जिसको चेतन महज समय की बरबादी ही करार देता रहा। भोजन में वह फल-फूल-सब्जी का संतुलन रखने का प्रयास करती तो चेतन दोनों समय केवल मांसाहारी भोजन ही चाहता। सोनम को घर में एक मंदिर चाहिए जो चेतन को कभी न भाया। इस प्रकार वैचारिक टकराव तो प्रारम्भ से ही होता रहा था।

दोनों अपने-अपने अहम से अंधे कुंए में घुस चुके थे। इस कारण किसी का ध्यान इस ओर सही तरह से जा ही नही पाया कि कोमल कली को ठीक से निखरने, फूलने एवं सुगंध वितरित करने के लिये प्यार के जल की जरूरत थी न कि घृणा की हवा। यह नहीं कि चेतन अब यह नहीं चाहता था कि ज़ारा बड़ी होकर एक होनहार यौवना बने किन्तु उसके सोचने के ठंग में वाह्य आडंबर एवं धन ही टपकता। चेतन सोचता कि अगर धन है तो सब कुछ मिल सकता है। वह स्वयं सुशिक्षित नहीं था और शिक्षा के महत्व से पूर्णतः अज्ञान भी।

करोड़ों कमाया और संकीर्ण सोच से सब मिटा दिया। सोनम की सोच इसके बिलकुल विपरीत। इसी वैचारिक टकराव के कारण चेतन और सोनम के बीच दरार पड़ी। तलाक हुआ और अब ज़ारा के कारण कलह का सागर तूफान मचाने लगा।

इस जीवन रूपी फुटबाल के मैदान में कई तटस्थ खिलाड़ी समय-समय पर आते रहे। दो गोल पोस्ट खाली थे। चेतन-सोनम के बीच ज़ारा फुटबाल बन गई जो कभी एक गोल पोस्ट में समा जाती तो कभी दूसरे में। जीत किसी की न सम्भव थी, न हो रही थी। कभी-कभी दर्शक तटस्थ खिलाड़ी भी ज़ारा फुटबाल को अपने ढंग से नियंत्रित करने के लिए उसको दो गोल पोस्टों के बीच सरकाते रहते। दुःख तो इस बात का रहा कि असहाय ज़ारा के मन में क्या हो रहा था किसी ने समझने का प्रयास तक न किया। बेचारी वह फुटबाल की तरह हमेशा जड़वत ही समझी गई।

चेतन बच्ची के सामने, जब वह उसके पास होती, अन्य मित्रों के साथ शराब और सिगरेट पीता जिसका असर ज़ारा के मस्तिष्क पर पड़ता रहा और वह अपने पिता से दूर जाती रही। बच्ची की कस्टडी को लेकर सोशल वर्कर उर्शला ने एक दिन ज़ारा से पूछा :

''तुम अपने पिता के साथ रहना चाहोगी?''

''नहीं''

''क्यों? क्या तुम अपने पिता को प्यार नहीं करती?''

''मैं पिता को प्यार तो करती हूँ किन्तु वह सिगरेट और शराब बहुत पीता है और मेरी माँ को रुलाता रहता है।''

''तुम्हारा पिता तो तुमको बहुत प्यार करता है। अपने घर पर रखना चाहता है।''

''पहले उसे सिगरेट-शराब छोड़नी पड़ेगी।''

ज़ारा ने बात को थोड़ा आगे बढ़ाते हुए यह भी बताया कि पिता को वह बड़ा सा घर भी वापस करना पड़ेगा जो उसने मुझसे और मेरी माँ से छीना है।

''ज़ारा तो क्या मैं तुम्हारे पिता को बता दूँ कि तुम अभी उसके पास रहना नहीं चाहती।''

'' जी हाँ।''

सोशल वर्कर हैरान थी कि केवल 6 वर्ष की बच्ची इस तरह से दृढ़ विचार रख सकती है। उसको शक हुआ कि शायद उसकी माँ ने ज़ारा को भड़काया है। उर्शला ने एक पत्र द्वारा चेतन को खबर कर दिया कि ज़ारा उससे क्यों नाराज़ है। पत्र की एक प्रतिलिपि कोर्ट के केस फाइल CSZ/3259 में भी लगा दी गई।

एक बार फिर इस प्रकार सोनम की जीत और चेतन की हार हो गई। पत्र पाते ही चेतन फिर गुस्से से उछलने कूदने लगा वास्तव में वह मात्र नाटक ही करता रहा कि वह ज़ारा को चाहता है। वास्तविकता तो यह थी कि वह अपनी भूतपूर्व पत्नी को परेशान करना एवं तड़पाना चाहता था ताकि उसका मनोबल टूट जाए और वह उसकी शर्तो को स्वीकार कर घुटने टेक दे। वह शकुनी की तरह नई योजना बनाने में लग गया। इस शकुनी को उकसाने एवं विनाशकारी सलाह देने के लिए सॉलीसिटर सहित उसके मदिरा पान ग्रुप के अन्य सदस्य थे। योजनानुसार चेतन ने कोर्ट में अर्जी लगाई 'यह सब ज़ारा की माँ द्वारा कराया गया है जिसके फलस्वरूप बेटी को पिता के विरुद्ध भड़काया गया है। एक माँ होते हुए उसे बच्ची के भविष्य की चिंता नहीं है और पिता के सामान्य मनोवैज्ञानिक प्रभाव वाले अधिकार को भी छीनना चाहती है। चेतन ने फिर से कहा कि सोनम के मानसिक संतुलन की जाँच होनी चाहिए और उसे अपनी बेटी से और अधिक मिलने और फोन पर बात करने का अधिकार भी चाहिए।' अर्जी के साथ अपनी बातों के पक्ष में उसने कुछ सूचना पुस्तकों एवं इंटरनेट से मिलाकर लगाई। बीच-बीच में चेतन सोनम को टेक्स्ट मेसेज द्वारा तरह-तरह से धमकाता रहा। सोनम का मनोबल टूटता रहा और वह हर बार रो-रो कर अपनी बच्ची को गले से लगाकर सुबकती रही। माँ को रोता देखकर ज़ारा का आँसू बहाना स्वाभाविक था। इस सबसे ज़ारा अपने पिता के विरूद्ध होती गई।

बर्मिंघम मैजिस्ट्रेट कोर्ट क्लार्क का पत्र सोनम के पास पहुंचा कि 25 तारीख को वह कोर्ट में हाजिर हो ज़ारा के पिता से संपर्क के संबंध में। कोर्ट ने सोशल वर्कर उर्शला को भी आदेश दिया कि वह बेटी-पिता के बीच संपर्क स्थापित करने के लिए

दोनों पार्टियों के बीच समझौता कराने का प्रयास करे। कोर्ट ने सोनम के डॉक्टर को भी पत्र लिखकर उससे सोनम के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के बारे में रिपोर्ट मांगी।

पत्र पाते ही सोनम चीखने-चिल्लाने लगी। मन ही मन ईश्वर को कोसते हुए कहती 'उसने ऐसा कौन सा पाप कभी किया है या किया होगा जिसका दंड उसे अब मिल रहा है। दाम्पत्य जीवन में लोग इसलिए प्रवेश करते हैं कि दोनों को हर प्रकार के सुख-सुविधा एवं जीवन का आनन्द मिले' सोनम बराबर कहती कि उसके संदर्भ में तो सिर मुंड़ाते ही ओले पड़ने लगे। फिर वह सोचती अब तो तीर तर्कश से बाहर निकल चुका है। परिणाम तो मिलना ही होगा।' तारीख आई और एक बार फिर चेतन सोनम जज के सामने थे। दोनों ओर की बाते सुनने पर डॉक्टर एवं उर्शला की रिपोर्ट पढ़ने के बाद फैसला दिया 'सोनम के मानसिक स्वास्थ्य की जांच एक निष्पक्ष मनोवैज्ञानिक द्वारा होनी चाहिए। और सोशल वर्कर को दोनों पार्टियों से बात कर वह रास्ता निकालना चाहिए जिससे बच्ची को माता-पिता दोनों का प्यार मिल सके। सोनम ने इसका विरोध कोर्ट में किया। निराश, हताश, हारी एवं टूटी हुई सोनम कुछ रोती हुई कोर्ट रूम से बाहर आई। हाल में पहुंचते ही वह सुबकियां लेने लगी। उर्शला ने उसको बहुत समझाया किंतु सोनम पर इसका कोई असर न पड़ा उल्टे वह उर्शला पर ही बरस पडी : ''यह सारा तुम्हारा ही किया है। एक औरत होने के नाते भी तुम नहीं चाहती कि मैं अपना जीवन शांति से बिता सकूं। तुमने हमेशा ज़ारा के पिता का ही पक्ष लिया है। लेकिन क्यों...?

''देखो सोनम मैं सरकार की तरफ से बच्चों एवं परिवार की भलाई के लिए ही काम करती हूँ। मुझ पर किसी का और किसी भी प्रकार का असर नहीं पड़ता। तुम दोनों को ज़ारा की जरूरतों एवं भावनाओं का ध्यान रखना चाहिए अन्यथा उस पर बुरा मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ सकता है। आप कृपया शक एवं आशंकाओं के भंवर में फंस कर अपने आप को परेशान न करें।''

सोनम को रोता देख चेतन मुस्कुराता हुआ दूर से सब देखता हुआ समझने का प्रयास करता रहा। उसने उर्शला के मोबाइल पर फोन लगा कर कहा - ''कैन आई टाक टु यू'' उर्शला को नहीं मालूम था कि वह कोर्ट में ही है और पूछा :-

''आप कहाँ है और कब बात करना चाहेंगे?''

''मैं कोर्ट में ही हूँ और शीघ्रातिशीघ्र बात करना चाहूँगा।''

उर्शला ने सोनम से बिदा ली। और चल दी चेतन से बात करने। चेतन ने उर्शला से कहाः

''थैकंयू फार योर हेल्प। अब आगे का काम कब शुरू होगा? सोनम की

मनौवैज्ञानिक जांच कब होगी तथा ज़ारा की कस्टडी कब मिलेगी?''

''यह सब अभी नहीं बता सकती। आप अपनी जरूरतें लिख कर भेजें। आप ज़ारा से किस प्रकार अधिक संपर्क रखते हुए कब-कब मिलना चाहते हैं।'' इतना कह कर उर्शला चली गई।

कोर्ट में सुनवाई के चौथे दिन ''कोर्ट आर्डर'' एवं उर्शला का पत्र भी पहुंच गया। चेतन शराब एवं सिगरेट पीकर मित्रों के साथ अपने जीत की खुशियाँ मनाने लगा। चेतन ने इससे यह अनुमान लगाया कि अब तो उसे ज़ारा की कस्टडी मिल ही जाएगी। सोनम का रोना-धोना शुरू हो गया। ज़ारा ने तमाम कोशिश की प्यार से माँ को बहलाने की। नादानी एवं बेवकूफी से सोनम ने बेचारी बच्ची को सब बता दिया कि पत्रों में क्या लिखा है। उसने साफ कह दिया कि वह अपने पिता के पास नहीं जाना चाहेगी।

कोर्ट के लोग और सोशल वर्कर अपनी गति से काम करते रहे। ज़ारा बड़ी होती गई और अब वह 9 वर्ष की हो गई थी। कोर्ट में हुए पुराने समझौते के अंतर्गत वह समय-समय पर अपने पिता के पास जाती रही। उसने कई बार अपनी माँ से आई फोन की अपील की थी जिसको सोनम ने यह कह कर ठुकरा दिया किः

''तुम अभी बहुत छोटी हो इतने मंहगे फोन के लिए। और मेरे पास इतने पैसे नहीं कि मैं तुम्हे यह फोन खरीद कर दे सकूं। देखो न मेरे पास बिल्कुल साधारण सा फोन है।''

''माँ! मैं यह सब नहीं जानती। मेरे साथ की तमाम लड़कियों के पास तो 6जी फोन हैं। वे सब मुझ पर हंसती हैं। मेरे कपड़ों को भी देख कर वे मज़ाक उड़ाती और कहती हैं कि क्या तेरी माँ इनको 'जंबल सेल' या संडे मार्केट से लाती है? माँ मुझको या तो आई फोन और अच्छे डिज़ाइनर कपड़े दो या फिर मेरा नाम इस स्कूल से कटवा दो। अगर यह नहीं होता है तो मैं कल से इस स्कूल में नहीं जाऊंगी।''

सोनम ने अपनी बेटी को समझाने की बहुत कोशिश की किंतु सब बेकार रहीं। सोनम के अंदर ही अंदर एक तूफ़ान जन्म लेता रहा। गुस्से से उसके होठ फड़कने लगे। वह अपने आप को रोक न पाई और तीन-चार तमाचें ज़ारा के गाल पर जड़ दिए।

''माँ, ठीक है आप जितना चाहें मार लें किंतु मैं कल से तब तक स्कूल नहीं जाऊंगी जब तक मेरी ज़रूरतें पूरी नहीं होतीं। और मैं पुलिस स्टेशन जाकर आपकी शिकायत भी कर दूंगी।'' सोनम घबरा गई और उसने अपने ब्रह्मास्त्र, जोर-जोर से रोने, का प्रयोग किया। थोड़ी देर बाद ज़ारा आकर माँ से चिपक कर रोने लगी। माँ तुम ही बताओ मैं क्या करूं? स्कूल में अपनी हंसी उड़वाऊं या फिर कूप मंडूक बन

जाऊं। मैं तुम्हारी मज़बूरी समझ सकती हूँ लेकिन माँ मैं भी मज़बूर हूँ। माँ कोई और काम ढूंढ लो जिससे अधिक पैसे मिलें या फिर बैंक से लोन ले लें। सोनम ने देखा और समझा कि शायद बात कुछ सम्भल गई है। उसने भी ज़ारा को अपनी बांहों में जकड़ लिया।

किंतु वास्तविकता तो कुछ और ही थी। माँ को सदमे के कारण नींद आ गई। ज़ारा ने चुपके से बाथरूम में जाकर अपने मोबाइल फोन से अपने पिता को सारी बातें बता दीं। चेतन ने सोचा कि यह मौका अच्छा है बेटी को अपनी भूतपूर्व पत्नी के विरुद्ध करने का। चेतन ने समझाते हुए ज़ारा से कहाः

''ज़ारा परेशान न हो। मैं सब सम्भाल लूंगा अगर तुम मेरा साथ दो तो। तुम्हें मैं वह सब दिलवा दूंगा जो तुम चाहती हो और तेरी माँ देती नहीं और मारती है। आई फोन, आई पैड और अच्छे डिज़ाइनर कपड़े आदि-आदि सब मैं तुमको तुरंत दिलवा दूंगा जैसे ही माँ को छोड़ कर मेरे पास आ जाओगी। मैं कोर्ट में कल ही लिख देता हूँ जो तुम्हारे साथ हुआ। क्या तुम मुझको यह सब लिख कर देने को तैयार हो।''

''ठीक है डैड। मैं जो आप कहेंगे वह लिख कर दे दूंगी जब मैं अगली बार आपके पास आकर रहूंगी।'' चेतन की सोचरूपी तर्कश से निकला हुआ तीर गाइडेड मिसाइल की तरह सोनम को छत-विछत करने के लिए निकलने के लिए मचल रहा था। वह इसी दिन की प्रतीक्षा वर्षों से करता आ रहा था। समय भी सोनम के विपरीत हो रहा था। वह ज़ारा की हरकतों से, बढ़ती उम्र के साथ, परेशान रहने लगी।

इतने में सोनम की आँख खुल गई और उसने बाथरूम से आती आवाज़ को सुना। जैसे ही उसने दरवाजा खटकाया ज़ारा ने फोन काट दिया। चेतन बराबर सोनम को तरह-तरह से प्रताड़ित करता रहा। कभी देर से ज़ारा को वापस भेजना तो कभी न भेजने का बहाना बनाना। स्कूल में भी सोनम के लिए परेशानियां खड़ी करता रहा। सोनम हर तरफ से तंग आ चुकी थी। ज़ारा को लेकर चेतन हमेशा कोई न कोई चिंगारी भड़काता रहा। एक आग के बुझने से पहले दूसरी आग सुलगने लगती थी। और इनकी तपिश में सोनम भस्म होती रही। इन सबसे तंग आकर सोनम ने कोर्ट के निर्देशों का उल्लंघन करते हुए ज़ारा का चेतन के पास जाना ही बंद कर दिया। सोनम को तरह-तरह की शारीरिक व्याधियों ने घेरना शुरू कर दिया था। अकेली वह अस्पताल-स्कूल-काम को लेकर परेशान हो चुकी थी। मदद के लिए उसको अपने परिचितों का ही सहारा लेना पड़ता था।

वह दिन भी आ गया जब सोनम के नाम से कोर्ट की नोटिस आई कि चेतन ने ज़ारा की कस्टडी के लिए आवेदन दिया है तथा सारी बातों की छानबीन के लिए

एक दी गई तारीख पर दोनों दलों को बुलाया गया था। पत्र मिलते ही सोनम हाथ पांव पटकने लगी और अपने मन ही मन में कहती रही- 'वह कोर्ट नहीं जाएगी। देखते हैं कि क्या होता है? अगर कोर्ट ने कस्टडी दे भी दी तो घर में किसी औरत के बिना बड़ी हो रही ज़ारा की ज़रूरतें पूरी न हो पाएंगी। चेतन झक मार कर ज़ारा को वापस कर देगा। अकेला वह क्या-क्या करेगा?'

पिछले 3-4 साल से चेतन ने एक बात पूरी तरह से गुप्त रखी थी। उसके ही दफ्तर में काम करने वाली एक स्काटिश तलाक़शुदा महिला पैट के साथ उसकी नज़दीकियां बढ़ती ही जा रही थीं। चेतन ने पैट से ज़ारा के बारे में बात कर रखी थी और इस बात से सोनम बिल्कुल अनजान थी। कोर्ट में सोनम नहीं गई। जज ने इसे कोर्ट का अपमान मानते हुए और सोनम की ओर से कोई बचाव न होने के कारण भी जज ने ज़ारा की कस्टडी चेतन को दे दी। पत्र लेकर चेतन सोनम के पास गया और कहाः

''ज़ारा को अब उसके साथ भेज दे।'' सोनम ने पत्र देखने के बाद कहाः

''जब तक कोर्ट से पत्र उसके पास नहीं आ जाता, वह इसके लिए तैयार नहीं है।'' दो दिन बाद वह पत्र भी आ गया और ज़ारा को लेकर चेतन चला गया। घर पहुंचने पर पैट ने चेतन-ज़ारा का स्वागत किया। पैट के बारे में चेतन ने ज़ारा को एक दिन पहले ही सब बता दिया था। पैट ने आगे बढ़ कर ज़ारा को गले लगाते हुए उसके हाथ में आई फोन का डिब्बा दे दिया। ज़ारा ने पैट एवं डैड दोनों का सप्रेम चुम्बन भी किया। पैट ने ज़ारा का कमरा सजा दिया था। ज़ारा का सारा सामान चेतन-पैट ने करीने से कमरे में लगा कर पूछाः

''ज़ारा तुमको यह कमरा कैसा लगता है? कोई कमी हो तो बताओ।'' ज़ारा ने चेतन को एक चुम्बन देते हुए अपना उत्तर दे दिया था। पैट ने कहा कि आज हम 'मैकडोनाल्ड' जाएंगे अपनी जीत का जश्न मनाने के लिए। क्या विचार है तुम्हारा ज़ारा?

और वहाँ जाकर आज उनकी 'ऐपलपाई' भी लेंगे। क्यों नहीं, निशचय ही। चेतन की लगाई आग अब और अधिक धधकने वाली थी। ज़ारा का विकराल रूप उभरने को उतावला था। पैट भी सोनम से दो-दो हाथ करने को आतुर थी। सब मिलकर अब सोनम को सताने एवं रुलाने के लिए व्याकुल बैठे थे। दूसरी तरफ सोनम इन सारी योजनाओं से अनजान अपने किए पर पश्चाताप करती हुई बड़बड़ाती रही- 'पहले पति गया और अब बेटी भी। मैं चेतन को मजा चखा कर ही चैन लूंगी। जो आग उसने लगाई है होलिका की तरह उसको ही इसमें मैं ढकेल दूंगी। देखेंगे वह कैसे अपने आपको बचाता है।'

अपनी ही नादानी एवं बेवकूफी से उसने अपनी जायी बेटी से सम्बंध तोड़ लिया यह कहते हुए कि ये सब एक ही थाली के चट्टे-बट्टे हैं। वह सोचती रही कि उसके नैतिक अधिकारों को छीन लेने में सबका हाथ था। सोनम इस निष्कर्ष पर पहुंच चुकी थी कि उसकी ऐसी दयनीय स्थिति बनाने में वह और वे सब एक साथ थे।

।।

uk l p 'kknh Iyht

साधना के दांए हाथ में लड्डुओं का डिब्बा एवं आँखों में कैद आँसुओं का समुद्र था। उसके विभाग के सभी लोगों ने डिब्बा तो देखा किंतु मचलते समुद्र की शांत लहरों को केवल धीरज ही देख सका। लड्डुओं का स्वाद लेते हुए सबने साधना को बधाई दी और अपने-अपने काम में लग गए। धीरज ने मुस्कराते हुए पूछाः

''साधना यह अजीब सी बात है, हाथ में सुंदर-स्वादिष्ट लड्डुओं का डिब्बा और आँखों में उदासी क्यों? वह अपरिवर्तनीय समय कब आने वाला है?''

धीरज के कमरे का द्वार बंद करते हुए साधना अपने आपको रोक न पाई और आँसुओं का समुद्र छलकने लगा। उसने सुबकते हुए कहाः

''सर क्या बताऊं, कुछ समझ में नहीं आता कि उस अपरिवर्तनीय पल की प्रतीक्षा बेसब्री से करूं या आजीवन मातम मनाने की तैयारी?''

''साधना, मैं समझा नहीं। ऐसे खुशी के समय इस तरह की बातें क्यों? अपने शब्दों एवं आँसुओं पीछे रहस्य का खुलासा, यदि सम्भव हो तो?''

''सर ये लड्डू और आँसुओं का कारण मैं चेन्नई से लेकर आई। हमारे सम्भवतः होने वाले सास-ससुर ने सम्भावित रिशते को स्वीकार तो कर लिया है किंतु... कहते-कहते उसकी जबान रुक गई।''

''लेकिन क्या। कहते-कहते तुम रुक क्यों गई?''

''सर हम लोग यानी हमारे माता-पिता और अन्य परिचित हिंदी भाषी हैं और रजनी के घर वाले तामिल। मेरी होने वाली सास ने साफ कह दिया है कि वह शादी का सारा कार्यक्रम केवल तामिल में ही करेंगी, जिसको हमारी ओर का कोई नहीं समझेगा। वे द्विभाषी पंडित के लिए भी नहीं तैयार हो रही हैं। हमारे सम्बंधी, हो सकता है, ऐसी शादी में आने से इनकार कर दें। समझ में नहीं आता कि यह बात मैं अपने माता-पिता को कैसे बताऊं या न बताऊं। क्या और कैसे कहूं? किससे सलाह लूं? सिंगापुर में मुझको कोई जानता ही नहीं है।''

''साधना, मैं अब समझ गया हूँ कि तुम किस प्रकार अभिमन्यु की तरह व्यूह में फंस गई हो और इससे बाहर आने की कला से अनभिग्य हो। क्या तुमने इन विषयों पर अपने मंगेतर से बातचीत नहीं की थी? वह तो पढ़ा लिखा समझदार लगता

है, तुम्हारे कहने के अनुसार। क्या उससे बात की है? वह क्या कहता है?''

''सर, सारी परेशानी की जड़ यही है और अगर अन्यथा न लें तो बाद में फिर बात करेंगे। इस समय तो सुबह-सुबह ही, मेरा सिर फटा जा रहा है और बड़ी घबराहट हो रही है। मैं वापस घर जाना चाहती हूँ।''

''ठीक है। सिकलीव के लिए पत्र देकर जा सकती हो।''

''थैंक यू।'' कहकर साधना कमरे से बाहर निकल गई।

सुशिक्षित, सुंदर एवं चुम्बकीय व्यक्तित्व वाली साधना के चले जाने के बाद धीरज उन अप्राप्य अदृशय कड़ियों को खोजने का असफल प्रयास करने लगा जिनसे सारी गाथा बन रही थी। हिंदी और तामिल भाषा में प्राकृतिक एवं नैसर्गिक भेद होने के कारण सहवास नही हुआ है, यह जगजाहिर है। किंतु इस प्रकार सांस्कृतिक अंतर भेदभाव का इतना बड़ा कारण भी बन सकता है यह धीरज के लिए अकल्पनीय था। धीरज जानता है कि साधना दफ्तर आने पर उसकी सलाह ज़रूर मांगेगी। इतने में कमरे का दरवाजा खुला और एक सहयोगी के साथ किसी शोधपत्र पर चर्चा शुरू हो गई।''

32 वर्षीया साधना के जीवन में, शादी को लेकर, नैराश्य भरने लगा था। वह सोचने लगी थी कि अब वह आजीवन अविवाहिता ही रहेगी। वास्तव में सिंगापुर आते समय उसके मन में विचार भी आया था कि शायद वहीं कोई अच्छा लड़का मिल जाय। चूंकि माता-पिता ने खुली छूट दे रखी थी, सब कुछ उसी को करना था। शादी डॉट कॉम जैसी सुविधाओं में उसको विश्वास नहीं था। यह सब व्यवसाय है। उसके अनुसार ऐसे संवेदनशील भावनात्मक विषयों के लिए यह ठीक नहीं हैं। साधना सोचती थी उसका भावी जीवनसाथी स्वतः मिल जाएगा।

दूसरी ओर 35 वर्षीय तामिल भाषी रजनीकांत भी कुछ ऐसी ही परिस्थितियों से गुजर रहा था। माँ के रूढ़िवादी विचारों के कारण सभी लड़की वाले पीछे हट जाते थे। सुंदर पढ़ा-लिखा, आक्सफॅर्ड विश्वविद्यालय, यू.के., में एक वरिष्ठ वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत था। रजनीकांत के माता-पिता के विचारों में आमूल अंतर था। पिता खुले दिमाग का तो माँ संकुचित रूढ़िवादी सोच से ग्रस्त। दोनों के बीच कलह होती रहती। पत्नी के हठ के आगे श्री नटराजन की नहीं चलती थी। रजनीकांत दूध पीते बच्चे की तरह माँ का विरोध करने में सदैव अक्षम ही रहता। वह केवल माँ के सामने जी हाँ, जी हाँ ही करता रहता। किसी बात पर उसके लिए माँ का विरोध करना अकल्पनीय था। लेकिन वह भी अंदर ही अंदर परेशान होता रहा।

कैंसर उन्मूलन पर होने वाली एक गोष्ठी में साधना की मुलाकात रजनीकांत से लगभग 6 माह पहले अमेरिका में हुई। पहली ही नजर में रजनीकांत को साधना

भा गई। पेपर प्रस्तुत करते समय तो साधना ने रजनीकांत का दिल पूरी तरह से जीत लिया। सुंदर तो वह थी ही मेधावी भी निकली, जो रजनीकांत खोज रहा था। साधना के चुम्बकीय व्यक्तित्व ने रजनीकांत को अपनी ओर खींच लिया। पहले दिन के अंत में दोनों एक रेस्ट्रां में मिले। दोनों ने अपनी-अपनी शोध परियोजना के बारे में विस्तार से बातें की। रजनी ने पहल करते हुए साधना के बारे में जानना चाहा। साधना के उत्तर की प्रतीक्षा किए बगैर उसने अपने बारे में वह सब बता दिया जो सम्भवतः हर लड़की अपने होने वाले पति के बारे जानना चाहती है। साधना ने प्रश्नों के माध्यम से कुछ अन्य आवश्यक बातें भी जान लीं। साधना का साहस बढ़ा और उसने भी अपने बारे में बता दिया। तीन दिन की संगोष्ठी में वे रोज मिलते रहे। इसके बाद वे अपनी-अपनी जगहों को वापस चले गए। ई मेल आई डी एवं मोबाइल फोन के आदान प्रदान के बाद, आपस में सम्पर्क रखने का दोनों ने वायदा किया। साधना को तुरंत वापस आना था जबकि रजनीकांत को कुछ दिनों बाद। जॉन एफ केनेडी एयरपोर्ट पर रजनी ने साधना को विदाई दी।

आई टी सुपर हाई वे पर दोनों की यात्राएं होने लगीं। विचार विनिमय कभी टेलीफोन पर तो कभी ई मेल से होते रहे। प्रस्ताव पर प्रस्ताव होने लगे। दोनों शीघ्र ही शादी करने के लिए आतुर थे। रजनीकांत ने प्रस्ताव रखा। साधना ने स्वीकार कर लिया। रजनी ने अपने माता-पिता का आशीर्वाद पहले ही ले लिया था। किंतु साधना ने अब तक ऐसा नहीं किया था।

साधना के माता-पिता डॉक्टर डिसूजा बड़े खुश हुए सब जान कर। अजमेर में उनके घर का कोना-कोना चहकने लगा। वायुमंडल ताजगी से भरने लगा। यहाँ तक साधना के दोनों प्यारे तोते भी नाच-नाच कर कहने लगे- ''बिटिया की अब शादी होगी हम तो खूब नाचेंगे खुशियाँ मनाएंगे और पिंजड़े से बाहर आ जाएंगे।'' श्री एवं श्रीमती नटराजन से मिलने के लिए डॉक्टर डिसूजा ने अजमेर अस्पताल से कुछ दिनों की छुट्टी ली और सारी तैयारी के साथ चेन्नई पहुंच गए। बड़े टोकरों में तरह-तरह के फल, ड्राई फ्रूट्स के अनेक डिब्बे, मिठाई के डिब्बे और सबके लिए अच्छे से अच्छे कपड़े लेकर पांच टैक्सियों में वे नटराजन जी के घर मामबलम पहुंच गए। घंटी बजते ही श्रीमती नटराजन ने दरवाजे को खोलते ही 'वड़प्पन' कह कर दोनों का स्वागत किया। डिसूजा दम्पति ने हाथ जोड़ कर नमस्ते किया। सेवादारों ने सारा सामान ला कर कमरे में रख दिया। कुर्सियों में बैठने के बाद श्रीमती नटराजन ने पूछाः

''एन्ना मिस्टर ऐंड मिसेज डिसूजा एल्ला नल्ला इरका। हाऊ वाज़ योर जर्नी तामिल में?''

थोड़ा-थोड़ा तो वे औपचारिक प्रश्न को समझ गए थे किंतु गलत जवाब न देने के डर से उन्होंने अनुरोध कियाः

''आई बेग योर पार्डन।'' नटराजन साहब सब समझ गए और बड़ी ही सौम्यता से कहाः

''मेरी पत्नी के पूछने का अर्थ है कि आप लोग ठीक से तो हैं। आपकी यात्रा अजमेर से चेन्नई तक कैसी रही?''

डिसूजा दम्पति की जान में जान आई और उन्होंने तनिक मुस्कराते हुए जवाब दियाः

''थैंक यू फॉर आस्किंग। हम लोग ठीक हैं। लम्बी यात्रा अच्छी रही। रास्ते में एक सभ्य संवेदनशील सज्जन के मिल जाने के कारण बड़ी सुविधा रही। उन्होंने यहां पर हमारी बहुत सहायता की। श्रीमती नटराजन ने अंग्रेजी में प्रश्न कियाः

''सो यू डोंट नो तामिल। अयइयो, अम्मा...अयइयो।'' इतना कहते हुए उन्होंने अपने दोनों हाथों को गालों के दोनों ओर लगा लिया। वह समझती रहीं कि विश्व में सबको तामिल आती है और आनी भी चाहिए। उनका व्यक्तित्व विवेकानन्द जी के कुएं वाले मेढक की तरह था जिसको सारा संसार कुएं से कमतर लगता था। बात को थोड़ा सम्भालने के उद्देश्य से नटराजन जी ने अपनी पत्नी को चाय-नाश्ता लाने के लिए कहाः

''थैंक यू फॉर टेकिंग ट्रबल टु कम। माई सन हैज़ रियली लाइक्ड योर डाटर। वी आर लकी।''

इस पर श्रीमती डॉक्टर डिसूजा ने कहाः

''साधना को भी रजनीकांत बहुत पसंद है। ईश्वर ने हम पर बड़ी कृपा की है।''

''जोड़ियाँ तो ऊपर वाला बना कर भेजता है।'' नटराजन जी ने शुद्ध हिंदी में कहा। इतने में श्रीमती नटराजन चाय लेकर आ गईं। कमरे में घुसते ही अपने पति को सम्बोधित करते हुए कहाः

''नी एन्ना कैकरें इन हिंदी।''

''वी आर वेरी प्राउड टु हैव योर सन ऐज़ अवर सन।''

''इक्वली वी टू आर प्राउड टु हैव साधना ऐज़ अवर डाटर।'' इस पर मुंह बनाते हुए तपाक से श्रीमती नटराजन ने कहाः

''नो! माई सन इज़ ओन्ली माई सन ऐंड नॉट योर्स बट योर डाटर इज़ नाऊ माई डाटर।''

यह सुन कर डिसूजा दम्पति को बड़ा धक्का लगा। दोनों अपने-अपने मन में

सोचने लगे कि उनकी बेटी कैसे संकुचित विचार वाले लोगों के परिवार का अंग बनने वाली है। वे समझ न पाए कि क्या कहें? थोड़ी देर के लिए कमरे में खामोशी पसर गई। नटराजन जी अपनी पत्नी का चेहरा देखते ही रह गए और थोड़ी देर बाद खामोशी को भंग करते हुए कह ही दियाः

''अम्मा नी एन्ना सोलरैं। इद कस्टमइलया।'' नटराजन जी ने सबसे चाय लेने का अनुरोध किया। शक्कर में बनी सफेद चाय को देखते ही डिसूजा दम्पति को अजीब सा लगा। दोनों बिना शक्कर की ब्लैक कॉफी ही पीने के आदी थे। चाय का एक घूंट लेते ही दोनों मन ही मन कोसने लगे। डिसूजा जी ने बड़े ही सौम्यता से कहाः

''थैंक यू फॉर सच ए नाइस कप ऑफ हॉट टी व्हिच वी बैडली नीडेड।'' नटराजन जी ने औपचारिकता निभाते हुए पूछाः

''आई होप यू डू टेक शुगर इन टी।''

''इट इज़ ओ के। थैंक यू।''

शादी के बारे में औपचारिक बातें करने के बाद डिसूजाज़ वापस चले गए। रास्ते में दोनों को लगा कि यह परिवार अब भी पत्थर युग में ही रह रहा है। विचारों की संकीर्णता स्पष्ट थी। उन्हें साधना के भविष्य के बारे में चिंता होने लगी। चिंता व्यक्त करते हुए श्रीमती डिसूजा ने कहाः

''खुले विचारों वाली मेरी बेटी का क्या होगा? वह इस परिवार में खप नहीं पाएगी तथा पल-पल उसका दम घुटता रहेगा। मुझे तो प्रारम्भ से परेशानियों की शुरुआत होती नजर आ रही है। हम इतना सामान लेकर गए किंतु उन्होंने एक बार भी आभार व्यक्त नहीं किया। चाय के साथ बिस्कुट के अलावा और कुछ था ही नहीं। हम तो नाश्ते में अपने मेहमानों को कई चीज परोसते हैं। बेटी को लड़का पसंद आया किंतु परिवार मुझको ठीक नहीं लगता। उत्तर-दक्षिण के इस मिलन में मुझे दिक्कतें आती नजर आ रही हैं। समझ में नहीं आता कि हमें बेटी से क्या कहना चाहिए?''

''साधना की माँ आप चिंता न करें। हमारी बेटी कुशल एवं समझदार है। वह सब ठीक कर लेगी। मुझे पूरा विश्वास है। हमको साधना से नटराजन परिवार के व्यवहार के बारे में कुछ नहीं कहना चाहिए।''

''मुझे डर लग रहा है।''

''सही कहूँ तो डर तो मुझको भी लग रहा है लेकिन हम कर भी क्या सकते हैं जिससे बेटी को सदमा न लगे।''

''सब ईश्वर के सहारे छोड़ देते हैं। हाँ एक बात तो अच्छी यह निकली कि वे, कम से कम अभी, दहेज नहीं चाहते हैं। अन्यथा मद्रासी लोग तो कई किलो सोना

और लाखों रुपए तक मांगते हैं।''

''हाँ, सो तो है।''

भय एवं आशंका का समुद्र अपने मन-मानस में समेटे दोनों अजमेर वापस पहुंच गए। अपनी मंत्रणा के अनुसार बेटी को बता दिया। साधना प्रसन्न थी कि चलो यह औपचारिकता भी पूरी हो गई। अब साधना की बारी थी चेन्नई जा कर अपने होने वाले सास-ससुर से मिलकर 'इंगेज़मेंट' की रश्म पूरी करने की। पारम्परिक मान्यताओं के विपरीत साधना अकेले ही गई। वापस लेकर आई चिंताओं की पिटारी। सबसे बड़ा झटका तो उसे तब लगा जब उसने मंगेतर को फोन किया।

''रजनी, मैं अभी-अभी अम्मा-बाबू जी से मिलकर आई हूँ। दोनों ने मुझे बहुत प्यार दिया जिससे राहत मिली। वे तुम्हारी तारीफ करते नहीं थक रहे थे। सुनकर अच्छा लगा। सब कुछ ठीक था किंतु एक बात से मन बड़ा परेशान है। हो सके तो मुझे राहत दो।''

''वह कौन सी बात है जो तुम्हे परेशान कर रही है। कृपया बताओ तो सही। हमारे माता-पिता ने भी तुम्हारी बड़ी तारीफ की।''

''रजनी! जैसा तुम जानते हो हम लोग हिंदी भाषी हैं। कितनी अच्छी बात है कि आप लोग थोड़ी हिंदी समझ लेते हैं किंतु उत्तरीय प्रदेशों के लोग तामिल समझते ही नहीं। इसीलिए भारतीय संविधान का त्रिभाषायी सूत्र विफल हुआ और साथ ही वह सपना भी समाप्त हो गया जिसके माध्यम से हर भारतीयों को जोड़ना चाहते थे। माँ ने साफ-साफ कह दिया है कि पूरी शादी केवल तामिल भाषा में ही सम्पन्न होगी। वह द्विभाषी पंडित के लिए भी नहीं तैयार हैं। हो सकता है यह हमारे परिवार वालों को अच्छा न लगे जिससे दिक्कत आ सकती है। क्या तुम स्थिति को सम्भाल सकते हो और माँ जी को समझा सकते हो?''

''साधना, मैं नहीं समझता था कि हमारी शादी में भाषा आड़े आकर दीवार बन जाएगी। मैं माँ के विचारों का विरोध नहीं कर सकता। होगा वही जो माँ चाहेंगी।''

''तो क्या मैं यह समझूं कि तुम कुछ नहीं कर सकते और उनके विचारों से सहमत हो?''

''तुम कुछ ऐसा ही समझ लो।'' सुबकते हुए साधना ने बिना कुछ कहे टेलीफोन को हैंग कर दिया। तुरंत ही रजनी का फोन आया। साधना ने यह कह कर कि वह अभी बात करने की हालत में नहीं है, टेलीफोन रख दिया। इस हादसे के दो दिन बाद वह अपने शोधसंस्थान में लड्डुओं का डिब्बा लेकर गई थी।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह अपने बॉस धीरज के कमरे में गई। उसकी अनुपस्थिति में एक नोट छोड़कर अपने विभाग में जाकर काम में व्यस्त हो गई। धीरज

ने पहले दिन ही घर जाकर कुछ वरिष्ठ-अनुभवी लोगों से साधना की समस्या के बारे में बता कर सलाह मांगी। लगभग सबने एक ही बात कही-

'शादी दो प्राणों और शरीर के एकाकार होने का पावन पर्व है। किंतु इसके साथ दोनों परिवार में समानता एवं एकता भी होनी चाहिए तभी यह रिश्ता चिरस्थाई और मजबूत होता है। इस पावन पर्व को, इसीलिए, दोनों परिवार के लोग, मित्र एवं उनके सम्बंधी मिलजुल कर मनाते हुए इसका आनन्द उठाते हैं। लगता तो यह है कि साधना और रजनीकांत में यह ऐकात्म्य हो गया है। किंतु केवल 6 माह में ही दोनों ने इस बंधन को स्वीकार कर लिया और वह भी एक बार ही मिलने पर, लगता है किसी कारण जल्दबाजी हो रही है। ऐसे रिश्ते को धीरे-धीरे पकना चाहिए। इसीलिए पुरानी परिपाटी के अनुसार सब कुछ तय हो जाने के बाद शादी सम्पन्न होने में लगभग 1 साल तक लग जाता था। लगता है दोनों परिवार में ऐकात्म्य नहीं हो पाया है। वे अपने-अपने ढंग से सोच रहे हैं बिना दूसरे के बारे में सोचे। रजनीकांत के माँ की सोच शादी के बाद भी कष्टप्रद हो सकती है। साधना को हर समय श्रीमती नटराजन परेशान करती रहेंगी और उनका बेटा मौन-मूक दर्शक बन सब केवल देखता और सुनता ही रहेगा। सब कुछ हो जाने के बाद यह परेशानी बच्चा होने के बाद बढ़ सकती है जो एक भयंकर रूप भी ले सकती है। अंतिम निर्णय तो साधना को ही करना है क्योंकि इसका सम्बंध भावनाओं से है, जो सबकी भिन्न होती हैं। इसमें उसके माता-पिता भी केवल ढांढस देते हुए उसके सर पर अपने हाथ रखकर सहारा ही दे सकते हैं। हमारे विचार से साधना को यह शादी नहीं करनी चाहिए। आजीवन मुसीबत उठाने से अच्छा होगा अकेला रहना, जिसकी वह अभ्यस्त हो चुकी है।'

कमरे में पहुंचने पर धीरज को साधना का नोट मिला। तुरंत उसने साधना को बुलाया। प्रातःकालीन औपचारिक अभिवादन के बाद उसको सहज बनाने के लिए धीरज ने साधना को बैठने के लिए कहा।

''साधना चाय तो लोगी''

''जी हाँ। थैंक यू।'' धीरज ने अपनी सेक्रेटरी को बुला कर दो कप चाय, चीनी अलग, और कुछ बिस्कुट लाने के लिए आदेश दिया। सम्भावित गम्भीर स्थिति को सामान्य बनाने के इरादे से धीरज ने पूछाः

''अब तुम्हारा सिरदर्द कैसा है? कल तो तुम्हारी तकलीफ चेहरे पर साफ झलक रही थी। आमतौर पर, आदमी की अपेक्षा, हर औरत साधारण परेशानियाँ अच्छी तरह छिपा लेती हैं।''

''सर, आज अभी मैं ठीक हूँ। फिर काम भी तो करना है। परियोजना को समय

पर समाप्त भी तो करना है। रजनीकांत माँ का विरोध नहीं कर सकता, ऐसा उसने साफ-साफ कहा है। इसी करण तो सबसे अधिक चिंता है। आपने क्या सोचा है?''

''साधना तुम्हारी परेशानी का असर काम पर पड़ सकता है। जो न संस्थान के लिए न तुम्हारे उज्ज्वल भविष्य के लिए ठीक होगा। तुम्हे जीवन में खुशियाँ पाने का और प्रसन्न रहने का अधिकार है। मुझको लगता है कि तुम अपने काम से संतुष्ट हो। गृहस्थ जीवन के शुरू होने से पहले ही कुछ परेशानियाँ आती दिख रही हैं। किंतु सबका समाधान है। सबको अपने विवेक का यथोचित प्रयोग करना चाहिए। मैंने कई अनुभवी लोगों से चर्चा की है। सबका सामूहिक सुझाव है कि यह विवाह तुम्हारे लिए हो सकता है उचित न हो। थोड़ा समय अपने निर्णय के लिए लो। अंतिम निर्णय तो तुमको ही करना होगा।'' इतना कहकर धीरज खामोश हो गया और साधना उसका चेहरा देखती रह गई।

''सर मैंने अपने कुछ पुराने मित्रों से भी सलाह ली है। उनकी भी ऐसी ही राय है। उनमें से एक ने यह भी कहा है कि रजनीकांत को सिंगापुर बुलाकर आमने-सामने बात करो। हो सकता है वह आने के लिए राजी ही न हो। तो तुम्हारा निर्णय आसान हो जाएगा अगर वह आ जाता है तो बिना किसी झिझक के साफ बातें कर लो। यह निर्णय कोई खेल नहीं। जिंदगी दांव पर लगाई जा रही है।''

''सुझाव में गम्भीरता है। हो सकता है यही एक सही रास्ता हो। किंतु यदि वह आता है तो उसे अपने घर पर न रख कर किसी होटल में कमरा दिला देना।''

''थैंक यू।'' कहकर साधना चली गई।

10 दिनों तक साधना एवं रजनीकांत के बीच कोई टेलीफोन बात नहीं हुई। लगभग रोज उसके ई मेल आते रहे। सबमें केवल एक ही बात होती कि हम लोगों को चेन्नई में रहना नहीं है तो फिर परेशानी क्या है? इतने सालों में तुमको ही मैंने अपने लिए उपयुक्त पाया है। मैं तुम्हे बेहद प्यार करने लग गया हूँ और किसी भी कीमत पर खोना नहीं चाहता। मेरी अपनी मजबूरी है। कृपया समझने का प्रयास करो। मेरा जन्म माँ द्वारा की गई मन्नतों के बाद हुआ था। मैं उनको दुःखी नहीं करना चाहता। इस प्रकार वह बराबर साधना को भावनात्मक रूप से कमजोर करने का प्रयास करता रहा। हर बार साधना का एक ही जवाब होता- 'मैं सोच रही हूँ। मुझे थोड़ा समय चाहिए। मैं भी अपने माता-पिता की एकमात्र संतान हूँ और उनको दुःखी नहीं कर सकती।' रजनीकांत ने भी इस बीच अपने कुछ मित्रों से बात की और सबने यही सलाह दी कि द्विभाषी पंडित की प्रार्थना स्वीकार कर लेनी चाहिए। अचानक एक सुबह रजनीकांत का फोन आ ही गयाः

''साधना, कई दिनों से तुम्हारी आवाज़ न सुनने के कारण एक अजीब सी

बेचैनी हो रही थी। ठीक तो हो। तुमको मेरी ओर से जो कष्ट हुआ उसके लिए मुझे खेद है। हो सके तो क्षमा कर दो।'' इतना सुनते ही साधना पिघल गई। प्यार भरे दो शब्दों की महिलाएं भूखी रहती हैं। वे कभी-कभी सब जानते हुए भी भूल जाती हैं कि यह एक छलावा हो सकता है।

''रजनी, थैंक यू। मेरी हालत भी तुम्हारे जैसी ही है। किंतु जब तक हम इस विषय का यथोचित समाधान नहीं निकाल लेते हैं तब तक हमें शादी के बंधन में नहीं बंधना चाहिए। मैं बहुत सोचने और समझने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंची हूँ। अगर हो सके तो सिंगापुर आ जाओ जहां हम खुलकर सारी बातें कर सकते हैं। इसमें ही हम दोनों की भलाई होगी। तुम सोच कर जवाब दो। जल्दबाजी की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं प्रतीक्षा करूंगी।''

''ठीक है साधना। सुझाव अच्छा लगता है। मैं फिर फोन करता हूँ। अपना ध्यान रखना।''

एक सप्ताह बाद सिंगापुर एयरलाइन की फ्लाइट नम्बर एस क्यू 319 लेकर वह चांगी एयरपोर्ट 1420 पर पहुंच गया। टैक्सी लेकर आर्चर्ड रोड पर स्थित 'रीजेंसी हयात' होटल में चेक इन करने के बाद उसने साधना के मोबाइल पर फोन किया। साधना ने कहा- ''तुम लम्बी फ्लाइट करके आए हो। थके होगे। अभी कुछ खा पी कर आराम करो मैं अपने एक सहयोगी के साथ, जिसने मेरी बड़ी मदद की है और जो हमारे बॉस भी हैं, 6 बजे लॉबी में मिलती हूँ।''

रजनीकांत लॉबी में दोनों की प्रतीक्षा कर रहा था। आगे बढ़ कर उसने साधना का स्वागत किया। परिचय होने के बाद धीरज ने अपना हाथ रजनीकांत की ओर बढ़ाया और अपने सरल स्वभाव का अहसास कराया। थोड़ी देर बाद धीरज ने तीनों के लिए कॉफी का आर्डर दिया और तीनों बातों में लग गए। बातों-बातों में ही यह पता लगा कि आक्सफॅर्ड में रजनी का बॉस धीरज के साथ लगभग 15 वर्ष पहले यॉर्क विश्वविद्यालय में पी.एच.डी. कर रहा था और दोनों के घनिष्ठ सम्बंध थे। धीरज ने सबकी कॉफी समाप्त होते ही कहाः

''तुम दोनों आर्चर्ड रोड की सैर कर आओ। तब तक मैं यह पता लगाता हूँ कि हमें भोजन के लिए कहाँ जाना चाहिए। रजनीकांत जी आप कैसा भोजन करना चाहेंगे।''

''इंडियन या यूरोपियन तो बिल्कुल नहीं। चाइनीज़, जैपीनीज़ या और कोई शाकीहारी अच्छा रहेगा। साधना तुम्हारी क्या राय है।''

''आपने ठीक ही कहा है। वैसे यहाँ के रेस्ट्रां के बारे में सर से ज्यादा कोई नहीं जानता।'' दोनों मौका पाते ही चले गए और धीरज की उंगलियाँ मोबाइल फोन

पर दौड़ने लगीं। अंत में उसने 7,107 द्वीपों वाले फिलीपीनों रेस्ट्रां 'पिनक बेट' में 8 बजे के लिए तीन स्थान सुरक्षित कर लिए। यद्यपि लगभग सभी फिलीपीनों मांसाहारी ही होते हैं किंतु फिर भी प्रयास कर कुछ शाकीहारी डिशिज़ का प्रबंध करा लिया। साधना के मोबाइल पर फोन कर यह बता दिया कि हमको रैफेल बुलेवार्ड के मरीना स्क्वायर में स्थित रेस्ट्रां में 8 बजे तक पहुंचना है।

सुंदर सुसज्जित रेस्ट्रां के सामने सब एक टैक्सी में पहुंच गए। वेटर ने तीनों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचा कर उनके लिए 'बुको जूस' लाकर रख दिया। नारियल को तगालो भाषा में 'बुको' कहते हैं। एक के बाद एक डिशिज़ आने लगीं। पामसिट, टुरांग, लुम्पिया, कांग-कांग और तला हुआ टाफू लाकर वेटर ने रख दिया। सबने भोजन का आनन्द उठाया और धीरज के चयन के लिए उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गई। अंत में स्वीट डिश के रूप में केवल फिलीपीन में पाई जाने वाली 'बुको पाई' परोसी गई। पाई में फिलिंग के तौर पर इसमें टेंडर नारिल का गूदा भरा गया था। यह न बहुत मीठी न बहुत गरम थी। धीरज रजनीकांत और साधना को होटल पर छोड़ कर अपने घर चला गया।

होटल में थोड़ी देर तक रुक कर, अगले दिन का कार्यक्रम निर्धारित कर साधना अपने घर चली गई। रास्ते से ही उसने धीरज को फोन कर बता दिया कि रजनी द्विभाषी पंडित के लिए अपनी माँ को मना लेगा। अतः अब उसे कोई अड़चन नहीं लग रही थी और वह कुछ संयत हो रही थी। धीरज ने बधाई के साथ सलाह दी कि अन्य बातों के लिए भी सारी बातें पक्की कर ले। उसने उसको दो दिन की छुट्टी मंजूर कर दी।

साधना के साथ तीन दिन तक सिंगापुर में घूमने फिरने के बाद रजनीकांत चेन्नई होते हुए यू.के. वापस पहुंच गया। सारी बातें साफ हो गईं। शादी की तारीख दोनों परिवारों की रजामंदी से निर्धारित कर दी गई। साधना ने सलाह तो सबसे ली किंतु अंतिम निर्णय अपनी सूझ-बूझ और विवेक से धीरज के निर्देशन के आधार पर किया। उसने अपने माता-पिता को पूर्णतया आश्वस्त कर दिया कि अब कोई चिंता की बात नहीं रही।

सांस्कृतिक टकराव का हल निकल सकता है अगर सही चाह सब तरफ हो। दोनों की शादी तो ठीक-ठाक हो गई। किंतु साधना के कुछ मित्र बार-बार यह कहते रहे- 'नो सच शादी प्लीज़'।

Ikkik;u dk nn

जी हाँ। आपने शीर्षक को पढ़, सुन या देख कर जो भी अनुमान लगाया वह ठीक ही लगता है। यानि कि लिफाफे रूपी शीर्षक में जो भी पत्र या दस्तावेज़ रखा है उसमें पाप के मार्ग पर चलने का दर्द या पाप के घर में रहने या रखने का दर्द दिया गया होगा, ठीक उसी प्रकार जैसे रामायन का दर्द का अर्थ, आज के संदर्भ में, होगा राम के मार्ग पर चलने का दर्द आदि। कभी-कभी लिफाफा देखकर उसमें लिखे मज़मून को भांपने में बड़ी त्रुटियाँ की जाती हैं। जैसा कि विवेकानंद जी को देखकर शिकागो में अमेरिका निवासियों के साथ हुआ था। यह कोई सामाजिक आलेख या किसी धर्म प्रचारक का व्याख्यान नहीं वरन् रसायनशास्त्र विशेषज्ञ की कहानी है जो अपने आप स्वयं सब कह रही है। लेकिन यह पापायन नाम के किसी व्यक्ति की कहानी नहीं। तो फिर यह है क्या? यही तो इस दर्द भरी कहानी का सारतत्व है। चिंतित न हों पर्दा उठने ही वाला है।

प्रातः उठते ही ललित ने अपनी पत्नी के लिए नारंगी, सेव, कीवी फ्रूट, पीली गाजर एवं अदरक का जूस निकाला। वह जूसर की सफाई कर ही रहा था कि इतने में चंद्रा ने किचेन में प्रवेश किया जो दो दिन पहले ही सिंगापुर से बर्मिंघम् आया था।

''चंद्रा, क्या तुम ताज़ा निकाला हुआ जूस लोगे?''

''नहीं। मैं यह जूस नहीं ले सकता।''

''क्यों? इस जूस में ऐसा क्या है कि तुम इसे ले ही नहीं सकते?''

''इसमें कीवी फ्रूट का रस भी है, जिसमें ऐक्टीनिडिन होता है और मुझे इससे अलर्जी (प्रज्यूर्जता) हो गई है।''

''चंद्रा, यह तो बताओ कि यह ऐक्टीनिडिन क्या है?''

''ऐक्टीनिडिन कीवी फ्रूट में पाया जाने वाला एक एन्ज़ाइम (किण्वक) है जो प्रोटीन परिवार के अंतर्गत आता है। यह कैसी विडम्बना है कि जिस किण्वक ने मेरे वैज्ञानिक जीवन की राह स्थापित की मैं अब उसी का उपयोग नहीं कर सकता। मैं पपीता, कीवी फ्रूट और पाइनएपल खा ही नहीं सकता। पिछले कुछ ही वर्षों में इनमें पाए जाने वाले किण्वक का मैं प्रत्यूर्ज हो गया हूँ। ये तीनों फल, जो किसी समय

मुझको बड़े ही प्रिय थे, अब मेरे लिए वर्जित हैं। दो-तीन वर्षों तक सिंगापुर पहुंचने के बाद मैंने इनका खूब आनंद उठाया।''

''चंद्रा, यह तो प्रकृति ने तुम्हारे साथ बहुत बड़ा अन्याय किया। चलो कम से कम पता तो लग गया कि ये फल तुम्हारे लिए अब हानिकारक हो गए हैं। चंद्रा, यह पता कैसे लगा कि तुमको इन फलों से प्रज्यूर्जता हो गई है? क्या कोई टेस्ट करवाया या यूँ ही अनुभव के आधार पर? और यह भी बताओ कि किण्वक है क्या तथा हमारे जीवन में इसकी क्या उपयोगिता है?''

''अस्पताल में जाकर कोई टेस्ट तो नहीं करवाया किंतु शरीर ने स्वयं ही सब बता दिया। अगर हम अपने शरीर की आवाज़ को ठीक से सुनें तो वह बहुत कुछ बताती रहती है। एक दिन मैंने खूब पपीता खाया। लगभग दो हवाइयन छोटे-छोटे, बिना बीज वाले, पीले-पीले मीठे पपीते मैं अकेले ही खा गया। पपीता मेरी कमजोरी बन चुका था। लगभग दो घंटे बाद मेरे पूरे शरीर में बुरी तरह से खुजली होने लगी। मैंने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। बाद में पता लगा कि मुझे लोगों को सुनने में भी दिक्कत आने लगी थी। यह क्रम कुछ दिनों तक चलने के बाद स्वतः ठीक हो गया। मैं पूर्ववत पपीता खाता रहा और शारीरिक कष्ट उठाता रहा। एक दिन ध्यान आया कि कहीं मैं किसी चीज का प्रत्यूर्जिक तो नहीं हो रहा हूँ। विलोपन प्रक्रिया से पता लगा कि मुझे पपीते से प्रत्यूर्जता हो गई है। यह बात उस दिन स्थापित हो गई जब मेरा एक मित्र पपीता ले कर आ गया। दोनों ने खूब जमकर पपीता खाया। उसके रहते ही 20 मिनट में ही मेरे सारे शरीर में खुजली होने लगी। मैं खुजलाते-खुजलाते परेशान हो गया और मेरा मित्र सब देखता रहा। परीक्षण और निरीक्षण दोनों हो चुके थे। यही टेस्ट मैंने पाइनएपल एवं कीवी फ्रूट के साथ भी किए। पता लग गया कि मैं इनका भी प्रत्यूर्जित हो गया हूँ। किण्वक एक प्रकार का रसायन है जो विभिन्न प्राकृतिक उत्पादों में पाया जाता है। इसका मुख्य काम है खाए गए पदार्थों में उपस्थित प्रोटीन को तोड़ कर पाचन क्रिया को सुगम बनाना। ये कई प्रकार के होते हैं जो पाचन क्रिया की गति को बढ़ाते हैं। जैसे यह कार्बोहाइड्रेट को तोड़ कर इसमें से ऊर्जा प्रदायक शर्करा को अलग कर शरीर के विभिन्न भागों तक पहुंचाने में मदद करता है।''

पचास वर्षीय चंद्रा का बीता जीवन सीधी राह पर कभी न चला था। पाठ्यक्रमीय विषयों के व्याकरण को समझा, पढ़ा, पढ़ाया और समझाया जा सकता है किंतु जीवन एवं प्रकृति के व्याकरण को समझ पाने की कला मानवीय चेतना में अब तक नहीं आ पाई है। इस विषय में विवेक पूर्णतया अक्षम ही रहा है। ऐसा ही कुछ चंद्रा के जीवन के साथ हुआ और होता रहा। जन्म भरतकुंड के नजदीक बीकापुर

में हुआ। भरतकुंड में श्रीराम के अनुज भरत ने 14 वर्षों तक रह, सिंहासन पर अपने बड़े भाई की चरण पादुका रख, कर राज किया था। वर्तमान कल्प के 24 वें महायुग के त्रेतायुग के इस ऐतिहासिक-दर्शनीय स्थान के रखरखाव की ओर हमारा ध्यान गया ही नहीं और अब इसका बुरा हाल है। केवल एक मंदिर ही बचा है जिसके चित्र पुरानी स्मृतियों को ताजा कर देते हैं। सम्भवतः उसी स्थल पर बना यह कोई अर्वाचीन मंदिर है। चंद्रा के कोमल मस्तिष्क पर बीकरपुर जैसे छोटे ग्रामीण परिवेश का निश्छल रहन-सहन अपनी आकृतियाँ उतारता रहा जो अब उसके स्वभाव में परिलक्षित हो रहा है। अगर अभिमन्यु माँ के गर्भ में प्राप्त सूचनाओं को संजो कर रख सकता है तो चंद्रा क्यों नहीं? जीवन के कुछ प्रारम्भिक वर्ष पटना में, जो कभी विश्व का सबसे बड़ा शहर जाना एवं माना जाता था, जिसे पाटलीपुत्र कहते थे। यह महान राजा अशोक की राजधानी रही और यहीं विश्व के सबसे महान कूटनीतिज्ञ चाणक्य का जन्म भी हुआ था। ग्रामीण परिवेश से ऐसे बड़े महानगर की चकाचौंध ने चंद्रा के मन-मस्तिष्क में विरोधाभासों में जीने की कला के बीज डाल दिए, जिसने उसके व्यक्तित्व से झिझक नाम की चीज ही गायब कर दी। उसके लिए छोटा-बड़ा सब समान होने लगा। वह यह सोचने का आदी सा होने लगा कि व्यक्ति छोटा या बड़ा मकान, धन-दौलत या अनेक ओहदे से नहीं वरन् विचारों एवं आचरण से होता है। इस सोच ने आगे चलकर चंद्रा की बड़ी सहायता की।

प्राथमिक शिक्षा एवं बाल्यकाल से लेकर युवावस्था तक चंद्रा का समय गंगा-यमुनी संस्कृति वाले, जहाँ शास्त्रीय संगीत एवं कला के विभिन्न रूप लगभग प्रत्येक बच्चे में बस जाते हैं, हैदराबाद में बीता। यहाँ उसके पिता एक विश्वविद्यालय में वरिष्ठ प्राध्यापक थे। इस स्थान पर संगीत की थोड़ी शिक्षा तो ली किंतु चंद्रा का मन तो कहीं और रमा था। जीवन में एक भिन्न प्रकार की कला के कल्ले फूटने को आतुर थे। यह तब मुखरित हुआ जब वह उच्च शिक्षा के लिए हैदराबाद से आई. आई.टी. कानपुर पहुंचा। एक सहयोगी मित्र के ड्रम खेलने के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर चंद्रा ने बैंड में अपनी शिरकत कराई तथा बड़े-छोटे ड्रमों पर अपने हाथ फुरती से चलाने लगा। आई.आई.टी. कानपुर में पूरे पांच साल वह इस बैंड का ड्रमर रहा तथा रॉक संगीत उसकी रगों में भरता रहा। इस अवधि ने चंद्रा का परिचय तरह-तरह के लोगों एवं संस्थानों से कराया। इस उपक्रम के जरिए चंद्रा का सार्वजनिक जीवन संवरता रहा तथा व्यक्तित्व में समन्वय एवं समरसता के बीज पड़ते गए। लोगों के विचारों एवं काम करने के ढंग का सम्मान करना, सम्भवतः, चंद्रा ने इन्ही पांच वर्षों में अपने जीवन का अंग बनाया।

उच्चतम शिक्षा, शोध कार्य, के लिए चंद्रा की नियति ने एक लम्बी उड़ान भरी

और वह भारत से यू.के. की धरती यॉर्क 1985 में पहुंच गया। यॉर्क विश्वविद्यालय से चंद्रा को सिसप्लैटिन (कैंसर के उपचार में प्रयोग की जाने वाली एक औषधि) के काम पर 1990 में पी.एच.डी. मिली। शोध का विषय था कैंसर के उपचार में प्रयोग की जाने वाली दवाइयों में काम करने की प्रक्रिया को कम्प्यूटर मॉडलिंग के माध्यम से समझना। रसायन शास्त्र एवं बायोलॉजिकल विज्ञान के अन्तर्सम्बधों पर आधारित इस शोध कार्य की ओर वैज्ञानिकों का ध्यान गया और उष्णकटिबंधी (ट्रॉपिकल) फल पपीते में पाए जाने वाले किण्वक ''पापायन'' पर चंद्रा का काम प्रारम्भ हो गया। और यहीं से पापायन के दर्द की कहानी की शुरुआत बाद में हुई। शोध का मुख्य उद्देश्य था कम्प्यूटर मॉडलिंग के माध्यम से यह समझना कि यह प्रोटीन चीजों को मुलायम कैसे करता है जिसमें कई अन्य चिकत्सीय गुण भी होने की संभावना हो सकती थी। बचपन में देखा था कि कच्चे पपीते का उपयोग गोश्त पकाने या उसे मुलायम करने में किया जाता था। लंदन के एक विश्वविद्यालय में यही काम प्रयोगशाला में हो रहा था और चंद्रा का काम था प्राप्त परिणामों को कम्प्यूटर के माध्यम से समझना और समझाना। पापायन यह काम अन्य पदार्थों में पाए जाने वाले प्रोटीन का विभाजन करता है। आण्विक स्तर पर पापायन के इस काम को देखना ही शोध का उद्देश्य था।

पपीते में पाए जाने वाले किण्वक पापायन एवं कीवीफ्रूट तथा पाइनएपल में उपलब्ध ऐक्टीनिडिन एवं ब्रामीलेन ने धीरे-धीरे चंद्रा के शोध कार्य को आकाश की ऊंचाइयों तक पहुंचाया और वह अपने विषय में पहचाना जाने लगा। कोई आश्चर्य नहीं कि इटैलियन क्रिस्टोफर कोलम्बस, जिसने पंद्रहवीं शताब्दी में यूरोप के लिए अमेरिका तक पहुंचने का समुद्री मार्ग खोजा था, ने पपीते को परियों का फल कहा। कोलम्बस के अमेरिका खोजने के लगभग 500 वर्ष पहले से ही यहाँ वाइकिंग बसे थे। इस प्रकार पपीते के गुणों की तारीफ करते-करते चंद्रा की आँखें भर आईं। बहुत पूछने पर उसने बताया कि किस प्रकार वह विभिन्न जगहों पर खाना खाने के लिए जाने से अपने आप को बचाता रहता और बहाना बनाया करता रहा है। पापायन के डर ने उसकी सोच ही बदल दी थी। किंतु जब भी कभी उसको मजबूरन जाना पड़ता तो उसका पहला काम होता था, यह पता लगाना कि खाने में किसी भी रूप में उन फलों का प्रयोग तो नहीं किया गया है जिनमें पापाइन हो सकता है।

एक रेस्ट्रां वाले ने चंद्रा की बात को गम्भीरता पूर्वक नहीं लिया। सुंदर तरीके से सारी डिशेज़ वेटर ने लाकर सबके सामने मेज पर रख दी। सबने बड़े चाव से भोजन किया, चंद्रा ने भी। स्वीट डिश मेज पर आ ही रही थी कि चंद्रा के चेहरे पर छाले आने लगे और दिल जोर-जोर से धड़कने लगा। देखते ही देखते वह एक ओर

को गिरने लगा। वह समझ गया कि रेस्ट्रां के मैनेजर ने उसको सही सूचना नहीं दी थी। तुरंत ऐम्बुलेंस बुलाई गई। चंद्रा अस्पताल में था तथा जांच करने वाले लोग रेस्ट्रां के किचेन में। पता लगा कि एक मिक्स्ड वेजेटेबल की सब्जी में पाइनएपल के छोटे-छोटे टुकड़े डाले गए थे। चंद्रा तो अस्पताल से ठीक होकर घर आ गया किंतु लापरवाही के जुर्म में रेस्ट्रां बंद हो गया। और वह पापायन के प्रभाव से आतंकित रहने लगा।

। ।

xkB yxh Vkb

यादों एवं संवेदनाओं का व्याकरण, जो अब तक अप्राप्य है, काल, परिवेश एवं सीमाओं को नहीं पहचानता। सम्राट के साथ भी आज अनायास कुछ ऐसा ही हुआ और वह कई दशकों पूर्व की घटनाओं के झुरमुट में घुसता रहा। हिरण की ऐसी परिस्थिति में हुई चीत्कार से, कहते है कि, ग़ज़ल का जन्म हुआ था। ठीक उसी प्रकार सम्राट भी कुछ बुनने में, जन्म देने में, लग गया।

दरअसल सम्राट 1980 के दशक में गुणवत्ता की आवश्यकताओं और उसकी परिभाषा एवं लोगों पर इससे पड़ने वाले प्रभावों एवं परिणामों पर जगह-जगह सेमीनार दिया करता था। विषय वस्तु को समझाने के लिए वह जन जीवन से जुड़े उदाहरणों को प्रस्तुत कर सिद्धांतों को प्रतिपादित करता। एक बार उसने कलाई में लगने वाली लेडीज़ घड़ी का उदाहरण ले सभागार में उपस्थिति प्रतिभागियों से पूछा कि वे बताएं कि इसकी गुणवत्ता को कैसे परिभाषित करेंगे। किन-किन बातों से ऐसी घड़ी की गुणवत्ता मापी जा सकती है। इस मस्तिष्क मंथन सत्र में प्रतिभागियों द्वारा बताई गई विभिन्न विशिष्टताओं को बोर्ड पर अंकित किया गया। किसी ने कहा कि ऐसी घड़ी को सही समय बताते हुए एक आभूषण की तरह आकर्षक भी होना चाहिए। सस्ती, टिकाऊ और महिलाओं की कलाइयों के अनुरूप होनी चाहिए। घड़ी का फीता विभिन्न रंगों का होते हुए आसानी से शीघ्रता से परिधानों से मैच करने के लिए बदलने वाला होना चाहिए आदि आदि। प्रतिभागियों ने वह सब बता दिया जो स्थापित परिभाषा के अनुकूल हो सकता था। किन्तु यह इस विशिष्ट परिस्थिति के लिए उचित नहीं था। सम्राट ने सबको साधुवाद देते हुए उस अंग्रेज महिला और उसकी घड़ी के बारे में बताना शुरू किया।

'एक वृद्धा अपने सामान के साथ दक्षिण वेल्स के लांयस होटल के स्वागत कक्ष में कर्मचारियों पर नाराज हो रही थी कि उन्होंने उसके लिए वह कमरा सुरक्षित क्यों नहीं किया जिसमें वह बराबर ठहरती रही है? डेस्क पर अपने दांए हाथ की कुहनी को टिकाकर वह बातें करती हुई नाराज हो रही थी। सुन्दर यौवना रिशेप्सनिष्ट ने हाथ में लगी घड़ी को देखकर स्थिति को तनिक सामान्य बनाने के इरादे से कहा :-

''मैडम आपके हाथ में बंधी घड़ी सुंदर एवं आकर्षक है।''

''धन्यवाद, यह मेरे पति के प्यार की निशानी है। चालीस साल पहले मेरे पति ने मुझे दी थी। मुझे बड़ी प्रिय है।''

''मैडम क्या आपने कभी यह देखा कि इसमें जड़े हीरों के टुकड़े सितारों से अधिक दमकते हैं।''

''किन्तु मेरे पति की यादें मेरे मस्तिष्क में सबसे अधिक चमकती हैं। जिनको कोई नहीं देख सकता। वे सिर्फ मेरी हैं।''

''मैडम क्या मैं आपकी घड़ी नज़दीक से देख सकती हूँ? क्या आप इसे उतार कर दिखा सकती है?''

''क्यों नहीं। इतना कह कर बृद्धा ने घड़ी उतार का उस यौवना को दे दी।''

घड़ी देखते ही यौवना ने बड़े आदर से पूछा- ''मैडम इतनी बढ़िया कीमती घड़ी किन्तु इसमें समय गलत है। क्या मैं इसे ठीक कर दूँ?''

घड़ी को यौवना के हाथों से छीनते हुए उसने आक्रोश में कहा ''खबरदार अगर घड़ी की सुइयों को छेड़ा। मैं इस घड़ी में समय थोड़े देखती हूँ। उसके लिए तो मेरी कलाई में दूसरी घड़ी है। यह घड़ी मेरे पति की याद दिलाते हुए वह समय बताती है जब विधाता की क्रूरता ने मुझसे मेरा पति छीना था। दूसरी घड़ी में इस घड़ी का समय दिखाते, मैं जहाँ भी होती हूँ ईश्वर को कोसते हुए उससे शिकायत करती हूँ। मेरे लिए इस घड़ी का सही समय बताना इसकी गुणवत्ता का सूचक नहीं।''

अनंत आकाशा से मौन हतप्रभ प्रतिभागियों को सम्बोधित करते हुए सम्राट ने पूछा।

''अब आपके गुणवत्ता की परिभाषा के बारे में क्या विचार हैं? मैंने अनेकानेक प्रकार से किसी वस्तु या सेवा की गुणवत्ता आकलन के मापदंड आपको बताए हैं और आप लोगों ने अन्यत्र भी पढ़ा-सुना होगा।''

''अब तक हमने गुणवत्ता की उन परिभाषाओं के बारे में ही समझा या जाना जो मापी जा सकती हैं। इन सबका संबंध उपभोगताओं की आशाओं एवं आकांक्षाओं से होता है। यह दृष्टांत बताता है कि गुणवत्ता की परिभाषा में मानवीय संवेदनाओं-भावनाओं का भी ध्यान रखना चाहिए।''

''ढीक कहा लेकिन इसका प्रयोग किसी वस्तु या सेवा के अभिकल्पन के समय कैसे करेंगे? इस प्रकार की चुनौतियों का ध्यान भी आप लोगों को रखना चाहिए।''

तालियों की गड़गड़ाहट से सेमीनार का सत्र समाप्त हुआ। दोपहर के खाने के समय सारे प्रतिभागी इसी बात की चर्चा करते रहे। प्रतिभागियों के अनुरोध पर अगले सत्र की दिशा ही बदल गई। मन-मस्तिष्क, भावना-संवेदना, कर्म-धर्म, झूठ-सच, भौतिकता- आध्यात्मिकता तथा जीवन लक्ष्य जैसे विषयों पर चर्चाएं शुरू हो गईं।

विचारों की उत्पत्ति से लेकर मानवीय प्रतिक्रियाओं पर बहसें चलने लगी। मनुष्य कब क्यों और कैसे मशीन बन जाता है, चर्चा का केन्द्र बिन्दु बन गया। वार्तालाप का निष्कर्ष निकला कि जब मानवीय संवेदनाएं मर जाती हैं, इच्छा शक्ति क्षीण होने लगती है, स्वार्थ से ही जीवन संचालित होने लगता है, परहित लोगों की सोच से बाहर निकल जाता है तब मानव और मशीन में कोई अंतर नहीं रह जाता। दोनों जड़त्व के पर्याय हो जाते हैं।

जीवन मृत्यु के दर्शन के बारे में बताते हुए सम्राट ने कहा ''जन्म एवं मृत्यु मानव संस्कृति के वे दो सत्य हैं जो लोगों के मस्तिष्क एवं उनकी सोच पर अमिट छाप छोड़ जाते है। जिंदगी जन्म और मृत्यु के दो किनारों के बीच सरिता की तरह बहती है। कभी-कभी मृत्यु का असर इतना गम्भीर होता है कि जाने वाले के साथ ही उसके कुछ निकटतम शुभचिंतकों का जीवन असह्य हो जाता है। कुछ मृत्यु की यादों को भुलाकर जीवन में आगे बढ़ते हैं। तो कुछ मृत्यु की यादों को संजोकर रखते हैं, जैसा कि हम देख चुके हैं। ऐसे लोग अपनी पत्नी या अपने पति अथवा माता-पिता के न रहने के दुःख में ही सारा जीवन बिता देते हैं। उनकी कही हर बात या किए हर कृत्य उनके मानस पटल पर वीडियो फिल्म की तरह अंकित रहते हैं और समय-समय पर उसको यादों के पर्दो पर उलट-पलट कर देखा करते हैं। मनोवैज्ञानिक निकष पर इनकों परखा नहीं गया है कि ये कैसे लोग होते हैं या इनके मस्तिष्क की संरचना क्यों कर अन्य लोगों से भिन्न होती है। ऐसे लोग भी पाए जाते हैं कि पति या पत्नी की मृत्यु के बाद तुरंत ही अपने नए पार्टनर के साथ गुलछर्रे उड़ाने लगते हैं। जबकि उनके सहचर की राख भी ढंडी न हो पाई होगी। हो सकता है जो लोग अपने निकटतम व्यक्ति की मृत्यु को अपनी यादों में जीवंत रखते हैं किसी अपराध बोध या अनकही बातों से पीड़ित/प्रभावित हो और ऐसा कर यदा-कदा अपने मन को हल्का कर लेते हैं। यह भी हो सकता है कि कुछ लोगों को कोई अपराध बोध न हो और वे अपने विशवास एवं प्रेम को जीवंत रखने के लिए स्मृति के कोष को खंगालते रहते हैं, कौन जाने?

सम्राट का वक्तव्य समाप्त होते ही एक प्रतिभागी ने खड़े हो कर पूछा ''अगर आप आज्ञा दें तो मैं एक ऐसा किस्सा सुनाना चाहता हूँ जिससे जो अभी आपने कहा है उसकी पुष्टि हो सकती है, होती है।''

''कितना समय लगेगा?''

''लगभग 10 मिनट।''

''ठीक है बताओ, सबके लाभ के लिए।''

''सर, मेरे पिता की जान पहचान के रंजन नाम के सज्जन थे जो अपना

नुकसान कर दूसरों की सहायता किया करते थे। यहाँ तक कि एक बार जब वह आफिस से घर वापस आ रहे थे तो उनकी बस बसंत बिहार के पास उलट गई। जिसमें उसको तो कोई चोट नहीं आई किंतु अन्य कई सहयात्रियों को गंभीर चोटें आई थीं। सबको अस्पताल या उनके घरों पर भेजने का प्रबंध कर घर वह लौटे। घर पहुंचने में काफी देर हो गई तो उनकी पत्नी ने पूछा :-

''आज क्या बहाना बनाएंगे, घर देर से आने का?''

''बस रास्ते में उलट गई थी। लोगों की मदद करते देर हो गई। मुझे खेद है देर से पहुंचने के लिए।''

''साहब, ईश्वर के लिए इतना सफेद झूठ तो न बोलें। मेरा क्या, इस पर कोई भी विश्वास नहीं करेगा। किन्तु फिर भी मैं आज भी हमेशा की तरह आपकी बातों पर विश्वास कर लेती हूँ। मैं जानती हूँ कि आप कैसे कोमल हृदय के व्यक्ति हैं।''

''अपनी पत्नी से झूठ बोलने की मुझे न कभी आवश्यकता थी न रहेगी। आपका अधिकार है विश्वास करना या न करना।''

''यही काम आप कई सालों से कर रहे हैं।''

''मैंने अब तक आपसे झूठ नहीं बोला है। दाम्पत्य जीवन विश्वास की नींव पर ही टिकता है। मैं यह भली भांति जानता हूँ। एक दिन आपको भी दृढ़ विश्वास हो जाएगा कि मैं झूठ नहीं बोलता।''

रात को रंजन के साले घर पर आए और बहन से पूछाः

''जीजा कहाँ हैं?''

''अंदर लेटे हैं। क्यों क्या बात हैं?''

''जिस बस में जीजा रोज वापस आते थे आज बंसत विहार में उलट गई। कई लोग अस्पताल में भर्ती किए गए हैं। जीजा को तो चोट नहीं आई?''

''नहीं वह बिल्कुल ठीक हैं। खाना खा कर सो गए हैं।''

रंजन की पत्नी कुछ भी न कह पाई और वास्तविकता को पूर्णतया पचा गई। किन्तु मस्तिष्क की कोठरी में सब कैद कर लिया। बहुपर्तीय आत्मा की सतह पर सब अंकित-टंकित हो गया। कब किसको मालूम था कि इस सत्य के पुजारी एवं मानवता के पोषक का अंत निकट है। जानलेवा बीमारी से ग्रस्त हो जाने के कारण 6 वर्ष पूर्व, लगभग 6 माह तक जूझते रहने के उपरांत रंजन ने अंतिम सांस ली। समय का मल्हम सबके घाव भरता रहा किन्तु उसकी पत्नी अब भी उन यादों को अपने कलेजे से बाहर नहीं निकाल पाई। यदा-कदा कुछ न कुछ याद कर अपनी आँखों को नम करती रहती। एक दिन उन्होंने रंजन के कुछ कपड़ों को ड्राई क्लीनिंग के लिए निकाला। क्यों कुछ स्पष्ट नहीं, उनको पहनने वाला भी कोई नहीं, यह स्पष्ट

था। रंजन की लगभग 30 टाईयों को भी दिया। किन्तु उनमें से एक टाई बहुत विशिष्ट थी। रंजन यद्यपि टाई की गांठ लगाने में माहिर था फिर वह कभी-कभी कुछ टाईयों की गांठ बिना खोले ही रख देता ताकि उसे दफ्तर जाने में देर न हो। आमतौर पर ऐसे पुरुष ही गांठ नहीं खोलते हैं जो या तो आलसी होते हैं या जिनको गांठ बांधने में हमेशाा परेशाानी होती है। रंजन के साथ ऐसा कुछ भी न था। वास्तव में बाहर से देखने पर इस टाई में कोई खास बात नहीं थी पुराने तरीके की गहरे भूरे रंग की कुछ फ्लोरल डिजाइन वाली, इसमें गांठ पुराने तरीके की छोटे सिंघाड़े की तरह थी किन्तु इसके माध्यम से उसकी पत्नी को रंजन के साथ होने का एहसास होता। जिसमें उसके हाथों का स्पर्श और उसके आत्मा की उपस्थिति वह पाती रही। ड्राई क्लीनर्स को खास तौर से चेतावनी दी गई कि वह इसकी गांठ को बिना खोले ही धोए। पहले तो उसने कुछ आना कानी की किन्तु वास्तविकता जानने के बाद वह सहमत हो गया। कौन सी बात कब किसके मन को छू जाती है, इसका गणित अब तक नहीं बन पाया है।

टाई धुलकर आने के बाद रंजन की पत्नी ने उसको उलट-पलट कर देखा और चुम्बन कर रख दिया। चेहरा सारी कहानी कह रहा था। आँखों में यादों का सागर हिलोरें लेता रहा। गांढ लगी टाई ने अपना स्थान पूर्ववत ग्रहण कर लिया, शायद फिर कभी दुबारा ड्राई क्लीनिंग के लिए।

❙❙

gCkh

हूबी मेरे चारों ओर घूमती रही। उसकी आँखों की चमक मेरी आँखों से बार—बार टकराती रही। मैं समझ नहीं पा रहा था कि मुझको बेचैनी क्यों हो रही है। हूबी के बदन की हरकतों को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता था कि उसके कारण शारीर, चित्त, में क्या हो रहा है? उसका सूक्ष्म शरीर विभिन्न ऊर्जाओं से सम्भवतः भरता हुआ उसके शरीर को गति दे रहा था। सूक्ष्म, कारण एवं स्थूल शरीरों के बीच इतना अच्छा समन्वय पहले कभी नहीं दिखाई दिया था। इस सबके बावजूद हूबी गौतम नारी की तरह शिला सी अपने स्थान पर जमी रही। उसके आँखों की चमक मेरी आँखों से टकराकर ज्योंही उस तक वापस पहुँची उसके कदम मेरी ओर बढ़ने लगे। मेरे मस्तिष्क में तरह—तरह के विचार आते रहे हूबी को देख—देख। हूबी की निगाहों में, उसके मुख मंडल पर, उसके हाव—भाव में मैंने एक गजब की आत्मीयता पाई। मेरे मन में भी कुछ—कुछ होने लगा। लेकिन क्यों कुछ स्पष्ट न हो पा रहा था। वह सम्भवतः, सब जानती थी किंतु मैं इसके विपरीत अपनी अज्ञानता एवं अहंकार के बोझ से दब जाने के कारण पूर्णतया अक्षम रहा। एक—दो कदम चलने के बाद हूबी रुक गई और एक टक मेरी ओर निहारती रही। न जाने क्यों मेरी आँख शून्य में कुछ निहारने लगी, लेकिन हूबी को नहीं। वह सहम गई, और सम्भवतः, भय से नहीं वरन् मेरी जड़ता से निराशा हूबी अपने ही स्थान पर धम्म से बैठ गई अपने चेहरे को पीछे की ओर मोड़ कर। मैं समझ गया वह मुझसे नाराज हो गई है। मेरी संवेदनहीनता को सह पाना उसके लिए असाध्य हो चुका था।

हूबी के विराज के घर आते ही सब कुछ बदलने लगा। विराज कई वर्षो से परेशान था अपनी दोनों बड़ी हो रही बेटियों के विवाह को लेकर। नीलिमा भी बेटियों से उलझती रही। उसने कई बार अपनी बच्चियों से पूछा कि उनको अपने लायक कोई लड़का अभी तक मिला—दिखा ही नहीं। गीतू एवं रीतू दोनों ने एक ही जवाब दिया। ''आपने हमको ऐसे संस्कार दिए ही नहीं। समय—समाज में आ रहे बदलाव के कारण हमने आपके अधिकारों को आपसे छीनना ठीक नहीं समझा। जल्दी क्या है? नौकरियाँ मिल गई हैं घर में कुछ धन आ रहा है। छोटे भाई को पढ़ाना भी तो है। आप दोनों कब तक सुबह से रात तक हम लोगों के लिए तपते-पिसते रहेंगे। पापा के लिए

मोटरसाइकिल के स्थान पर शीघ्र ही कार भी खरीदनी है। चिंता न कर मेरी प्यारी माँ सब ठीक ही हो रहा है।'' नीलिमा ने गीतू—रीतू को अपने आँचल में भरते हुए उनके बालों को अपने दोनों हाथों की उँगलियों से सहलाना शुरु कर दिया। दोनों ने भी माँ को अपनी बाँहों में समेट लिया। विराज ने दोनों की शादी के लिए मैट्रोमोनियल कालम में कई बार विज्ञापन दिए तो थे किंतु कहीं से कोई उत्तर नहीं आया था। 23-10-14, 2 बजे अचानक बड़ी बेटी गीतू के लिए नैनीताल से एक प्रस्ताव आया, फोटो के साथ। लड़का शीघ्र ही अमेरिका जाने वाला था। गीतू की तरह से संकल्प ने भी विजनेस एडमिनिस्ट्रेशन में डिप्लोमा कर रखा था। संकल्प के पिता देवेश का आयात—निर्यात का एक छोटा सा किंतु सफल व्यापार था। पत्र के लेटर बाक्स से गिरते ही हूबी ने उसको विराज को सौंप दिया। हूबी के चेहरे पर नैसर्गिक प्रसन्नता थी तो विराज के चेहरे पर वही पुरानी छाई हुई उदासी एवं निराशा। विराज ने पत्र को बिना खोले ही एक ओर बिस्तर के सिरहाने रख दिया। हूबी ने पत्र उठाकर अबकी बार नीलिमा को थमा दिया। लगता है कि हूबी की एक्सरे की क्षमता रखने वाली आँखों ने पढ़ लिया था कि पत्र में लिखा क्या है? नीलिमा ने पत्र को उठाकर उलट—पलट कर खूब देखने के बाद बड़ी बेसबरी—उदासीनता के साथ एक किनारे रख दिया। हूबी की आँखें हर समय नीलिमा के चेहरे को ही निहारती रहीं। यह सब देखने के बाद वह भागकर गीतू के पास गई और उसको कुरते से खींचती हुई नीचे ले आई और पत्र उठाकर उसके हाथों में दे दिया। गीतू समझ गई कि हूबी क्या चाहती है। गीतू ने पत्र खोलकर पढ़ना शुरु किया ही था कि नीलिमा ने पूछा ही लिया—''बेटी क्या लिखा है इस पत्र में।''

''माँ लगता है आप दोनों ने जो किया उसके कारण हूबी मुझको खींच कर नीचे ले आई। आप खुद ही पढ़ लें। मैंने तो पढ़ना शुरु ही किया था। मेरी शादी के लिए कहीं से प्रस्ताव आया है। विस्तार से आप दोनों देखें। फोटो मैंने देख ली है। मुझको पसंद है।''

नीलिमा ने गीतू को गले लगाते हुए विराज को हिलाकर उठाया और कहा—''देखिए न जिस खुशखबरी की प्रतीक्षा हम सालों से करते रहे हैं वह शायद आ ही गई है। यह पत्र पढ़कर समझिए और हमको भी समझाइए। अगर सब ठीक लगे तो यदि पत्र में फोन नम्बर दिया हो तो पत्र प्राप्ति की खबर तो कर ही दें।''

विराज बिस्तर से चौंक कर ऐसे उठा जैसे कहीं से उसको 400 वोल्ट का झटका लगा हो या किसी ने बर्फीले ठंडे पानी की बाल्टी ही उसके ऊपर उलट दी हो। नीलम से पत्र छीनते हुए उसने सबसे पहले पत्र की सुंदर लिखावट की तारीफ की। मोती के दाने की तरह एक—एक अक्षर अंगूठी में जड़े नगीनों की तरह लग रहे थे। विराज को अपने बड़े भाई की लिखावट की अकस्मात याद आ गई। आँखे नम होने वाली

ही थीं कि नीलिमा ने कहा—

''कृपया पत्र तो पढ़ेंगे या यूँ ही उसे देखते ही रहेंगे।'' ''लो तुम भी देख लो। इसकी लिखावट ने पूज्य भइया की याद दिला दी।''

''ठीक है पत्र के भावों को तो बताओ कि पत्र लिखने वाला कौन है तथा जिस लड़के के बारे में ब्यौरा भेजा गया है वह आपको कैसा लगता है? फोटो तो मेरी गीतू को पसंद आ गई है।''

''तो उसने हम लोगों से पहले ही सब जान लिया है।''

''इसमें गीतू का कोई दोष नहीं। यह सब हूबी का किया है। हम समझे नहीं। गीतू समझ गई और पत्र खोल कर देखना शुरु ही किया था कि मैंने टोक दिया।''

''चलो इसमें कोई बुराई नहीं। हमने अपने बच्चों को एक मित्र के रूप में बड़ा किया है। इसीलिए तो घर में खुशहाली ही रहती है। आम घरों की तरह सबके बीच नोक—झोंक, खींचा—तानी तथा मतभेद नहीं।''

''लो लड़के के पिता का पत्र है। लड़का गीतू की तरह ही पढ़ा लिखा है। शीघ्र ही अमेरिका जा रहा है। मुझको तो यह प्रस्ताव अच्छा ही नहीं बहुत अच्छा लगता है। गीतू को पुकारकर उससे पूरी सलाह ले लेनी चाहिए।''

घर में सबके साथ मंत्रणा हुई। बात बनती नजर आने लगी। प्रस्ताव में साफ लिखा था कि वे दहेज के पक्ष में नहीं हैं। और सब कुछ ठीक होने पर शादी शीघ्र ही करना चाहते हैं। यह सब ठीक वैसा ही था जैसा कि विराज का परिवार चाहता था। बिना किसी विलंब के विराज ने देवेशा को फोन मिलाया। घर पर कोई न था। अतः देवेशा के मोबाइल के नम्बर अपने स्मार्ट फोन पर दबाए। कुछ ही पलों में विराज को सुनाई दिया— ''मैं जिंदगी का ख्वाब निभाता चला गया, हर फिक्र को धुँऐ में उड़ाता चला गया।'' उत्तर में आवाज आई—

''देवेशा। और आप?''

''मैं दिल्ली से गीतू का पिता विराज।''

''बहुत—बहुत धन्यवाद। तो आपको मेरा पत्र और संकल्प का चित्र मिल गया।''

''जी हाँ। अभी थोड़ी देर पहले ही। घर पर फोन किया था। कोई उत्तर न मिला।''

''घर पर कोई नहीं है। हम सब दिल्ली के रास्ते में हैं। बेटे संकल्प के वीज़ा के लिए उधर आ रहे हैं। सोमवार को वीज़ा ऑफिस जाना है।''

''यह तो बड़ी खुशी की बात है। आप ठहरेंगे कहाँ? उचित समझें तो शाम का भोजन हम लोगों के साथ करें। भोजन—भजन एवं परिवार की चर्चा सब एक साथ

हो जाएगी।''

''मैं अपने छोटे भाई के पास मोतीबाग में ठहरुँगा। वह विदेश मंत्रालय में एडीशनल सेक्रेटरी है। आज शाम तो पता नहीं कब पहुँचेंगे? कल आप सब क्यों नहीं हमारे साथ भोजन करें? सर्वेश से पूछ कर आपको सूचित करता हूँ। आप भी घर में सलाह कर लें। ठीक है। जैसा आप उचित समझें क्या बच्चों को भी साथ लाना होगा?''

''उन्हीं के कारण तो यह सब हो रहा है। सभी बच्चों को साथ लेकर आना होगा।'' मैं सर्वेश से बात कर थोड़ी देर में ही फोन करता हूँ।''

विराज ने तीनों बच्चों के साथ नीलिमा को बताया कि संकल्प के पिता का क्या प्रस्ताव है। नीलिमा ने परम्परा की बात करते हुए बताया कि हम लोगों का वहाँ जाना उचित न होगा। छोटी बेटी रीतू ने कहा—

''पापा मुझको तो कोई बुराई नज़र नहीं आती। प्रस्ताव उनकी ओर से आया है। दकिया नूसी रुढ़िवादी परम्परा से क्या बनता है। हमको अपना उद्देश्य पता होना चाहिए। समाज में सही परिवर्तन लाना तो हमारा धर्म होता है। दीदी आप क्या सोचती हैं?'' सबने रीतू की बातों का समर्थन किया। नीलिमा भी मान गई किंतु यह जरुर जोड़ दिया कि—

''उनसे कहें कि हम लोगों की इच्छा है कि कल का भोजन आप हमारे साथ करें। वैसे हम लोगों को भी मोतीबाग आने में कोई परेशाानी नहीं है।'' यह सारी बातें विराज के बेडरूम में हो रही थीं। इन सब बातों को हूबी बड़े ही ध्यान से अपने कानों को हाथी के कानों के समान खड़ाकर सुनती रही। बोली तो कुछ भी नहीं किंतु बार—बार विराज के शरीर से चिपकती रही और गीतू भी उंगलियों को चूमती रही। लगता है उस सब बातों से हूबी की भी पूर्णतया सहमत थी। विराज ने प्रत्युत्तर में कहा—

''अगर उन लोगों ने हमारा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तो खाने का मेन्यू क्या रखा जाएगा? कौन—क्या प्रबंध करेगा? और जो औपचारिकताएँ होती हैं, उसका निर्वाह कैसे होगा?''

''पापा पहले उनको आने तो दें। सारा प्रबंध हम मिलजुल कर लेंगे। अगर सब बात बन गई तो आपने तो लगभग सारा प्रबंध कर ही लिया है। सब हो जाएगा। बात को आगे बढ़ाएँ। हम शीघ्र ही दीदी का विवाह रचाना चाहते हैं ताकि मेरे लिए भी रास्ता साफ हो जाए।'' विराज ने उठकर रीतू का मस्तक चूमा और कहा ''लगता है कि ऐसा ही होगा?'' नीलिमा लग गई सारा प्रबंध करने में।

विराज अपने पूरे परिवार के साथ फलों एवं मिठाई के टोकरों को लेकर मोतीबाग निर्धारित समय, रविवार को 2 बजे शाम, पहुँच गया। विराज का बेटा ईरज बड़ा ही उत्सुक था सब जानने देखने के लिए। सर्वेशा 1985 बैच के आई.ए.एस. थे तथा

उसके बेटे विमलेश ने अभी पिछले साल आई.एफ.एस. में तीसरा स्थान प्राप्त कर मसूरी में प्रशिक्षण शुरु कर दिया था। संयोगवश विमलेश भी अपने माता–पिता से मिलने के लिए घर आया था। सर्वेश की पत्नी नलिनी ने नौकरों के साथ काम पूरा कर लिया था। घर की घंटी बजते ही, नौकरों के स्थान पर, सर्वेश एवं देवेश दोनों ने विराज परिवार का स्वागत किया। सर्वेश ने आगे बढ़ते हुए विराज से हाथ मिलाते हुए अपने बड़े भाई का परिचय कराया। गीतू–रीतू को देखकर, जो सुंदर सिल्क की साड़ियों में और अधिक सुंदर लग रही थीं, सर्वेश–देवेश दोनों ही आत्म संतुष्टि से परिपूरित हो गए।

औपचारिकताओं के बाद, दोनों परिवारों के बीच परिचय हो जाने पर, देवेश की पत्नी रागिनी उठकर गीतू के पास बैठ गई। उसने अपने पति को अपनी ओर आने का संकेत कर दिया। बात को शुरु करते हुए देवेश ने कहा–

''देखिए, विराज जी, हमने तो कई महीनों की सोच–विचार के बाद ही प्रस्ताव आपको भेजा था। गीतू एवं आपके परिवार से हम सभी पूरी तरह आश्वस्त हैं। हमको तो सिर्फ आप लोगों से मिलना मात्र था सो आज हो गया। हमारा निर्णय हो चुका है। अब आप थोड़ा समय ले लें और बताएँ कि आप लोगों का क्या निर्णय है।'' विराज ने धन्यवाद देते हुए बड़ी ही विनम्रता पूर्वता उत्तर दिया–

''भाई साहब। गीतू एवं मेरे परिवार में विश्वास रखने के लिए हम आपके आभारी हैं। जैसी ईश्वर की इच्छा। किंतु हम बेटे संकल्प से भी सुनना चाहेंगे कि उसकी क्या इच्छा है। बदलते हुए समय के साथ, जैसे आपने रुढ़िवादी विचाराधारा को बदला है, उसी प्रकार इस ओर भी ध्यान देना, मेरे विचार से, उचित होगा।''

''आप ठीक कह रहे हैं। बोलो बेटे संकल्प। तुमने गीतू को देख लिया है। परिवार से भी मिल चुके हो। सारी बातों पर हम विस्तार से चर्चा करते रहे हैं। अब तुम ही सबको बताओ कि तुम्हारा क्या निर्णय है?''

''पापा–माँ गीतू मुझको पसंद है। बाकी सब तो आप दोनों ने देख ही लिया है। गीतू हमारे परिवार में ठीक रहेगी।'' विराज ने उठकर पहले गीतू का मस्तक चूमा और फिर संकल्प के मस्तक को चूमते हुए अपने गले से लगाया। संकल्प विराज एवं नीलिमा के चरण स्पर्श करने ही वाला था कि विराज ने उसको अपनी दोनों बाहों में भर लिया। विराज ने देवेश एवं रागिनी को सम्बोधित करते हुए कहा–

''बहन जी एवं भाई साहब आप सबने मेरे कहने के लिए बहुत कम छोड़ा है। नियति के निर्णय को टालना असम्भव है। मैं परिवार एवं गीतू का सामूहिक निर्णय आपके नैनीताल वापस जाने से पहले, सम्भवतः, कल तक बताता हूँ। नाश्ता पानी के बाद सब भोजन के लिए बैठ गए। सारे समय विमलेश की निगाहें रीतू का पीछा करती

रहीं। रीतू के चुम्बकीय आकर्षण की ओर विमलेश खिंचता जा रहा था। जब से विमलेश को यह पता लगा कि रीतू ने लेडी श्रीराम कालेज में मीडिया की डिग्री ली है तबसे तो वह भी कुछ सोचने लगा था, अपने विवाह को लेकर। रीतू के सौंदर्य–समोहन के वाणों ने कामदेव के वाणों का काम किया। खाने के बाद लगभग 10–30 बजे विराज सबको धन्यवाद देने के बाद अपने परिवार के साथ वापस आ गया।

''गीतू की माँ संकल्प की तरह अब हमको गीतू से भी पूछना है कि सब कुछ जानने–समझने के बाद उसके क्या विचार हैं?'' रीतू ने बीच में टोकते हुए कहा–

''पापा कल से सप्ताह की भाग–दौड़ शुरु हो जाएगी। हम लोगों को घर पहुँच कर इस पर चर्चा करनी होगी। दीदी तुम्हारा क्या विचार है।''

''घर पहुँचकर तरह–तरह की बातों पर विचार हुए और सामूहिक निर्णय हुआ कि इस रिश्ते को स्वीकार कर लेना चाहिए। गीतू ने एक बात और कही जिससे यह स्पष्ट हो रहा था कि शायद विमलेश, सर्वेश का बेटे, की आँखे बराबर रीतू पर ही जमी रहीं। हो सकता है उसको रीतू पसंद आ गई है। विराज ने रीतू से पूछा–

''क्यों बेटी? क्या तुमने भी कुछ ऐसा एहसास किया?''

''पापा ईश्वर ने मुझमें दीदी की तरह एक्सरे वाली निगाहें नहीं दी हैं। हो सकता है उन्होंने जो पाया वह ठीक ही हो। किंतु अभी तो फिलहाल हमको दीदी के बारे में अपने विचारों को केन्द्रित रखना है।''

इन सब बातों के बीच हूबी लगातार कमरे में चक्कर लगाती रही। वह अपने भाव को इन सब परिसंवादों के बीच शामिल रखना चाहती थी। सब बातों से वह पूर्णतया संतुष्ट होकर कमरे में ही पसर गई। गीतू–रीतू यह कहकर कि कल हमको काम पर जाना है, अपने–अपने कमरों में चली गई। ईरज पहले ही सोने के लिए जा चुका था। विराज–नीलिमा के चेहरों पर कई वर्षों से फैली उदासी के तनाव में कुछ राहत आई और दोनों ने जाकर हूबी को प्यार किया और मंदिर में जाकर शांतभाव से ईश्वर को धन्यवाद देते हुए मन ही मन कहा–'आपके दरबार में देर हो सकती है किंतु अंधेर नहीं होती, यह स्पष्ट है।'

उधर सर्वेश के घर भी सारी बातों पर विचार–विमर्श हो रहा था। सबने एक स्वर में परिवार की तारीफ की तथा देवेश के चयन को सराहा। नलिनी ने अवसर पाकर देवेश–रागिनी से पूछा–''आप दोनों को विमलेश के लिए रीतू कैसी लगती है? लगता है विमलेश को रीतू पसंद है।'' रागिनी ने बड़े प्रेम भाव से कहा–

''यदि विमलेश को रीतू अपने लिए ठीक लगती है और उसने अपनी ट्रेनिंग के बीच किसी को चुन नहीं रखा है तो लड़की तो हर मामले में अच्छी है। वैसे आमतौर पर अब यह चलन हो गया है कि आई.ए.एस. या आई.एफ.एस के बच्चे अपने ही

साथियों से संबंध बना लेते हैं। क्यों बेटे विमलेश तुमने क्या सोचा है?''

''ताई। मैंने अभी तक अपने लिए कुछ सोचा ही नहीं था। अब भइया की शादी पक्की हो रही है तो सोचेंगे। हाँ रीतू तो अच्छी है। मुझको रीतू में वे सब बातें दिख रही हैं जो हमारे परिवार को एक साथ रख सकेंगी। ताऊ की निगाह और सोच—विचार की तारीफ तो पिताजी के मुँह से मैं बचपन से ही सुनता रहा हूँ।'' विमलेश की इन बातों को सुन कर सर्वेश—नलिनी ने एक स्वर में देवेश को संकेत करते हुए कहा—''आप यदि उचित समझें तो विराज को प्रस्ताव भेज सकते हैं। परिवार आदि के बारे में हम सब कुछ जान गए हैं। रीतू विमलेश को पसंद आ गई है। देरी किस बात की है और यदि सबको ठीक लगे तो दोनों भाइयों की शादी संकल्प के अमेरिका जाने से पहले एक ही मंडप के नीचे क्यों न करवा दें। यदि श्रीराम जी के साथ चारों भाइयों की शादी एक ही परिवार में एक साथ हो सकती है तो क्यों नहीं इन दोनों की भी।'' सर्वेश के तर्क एवं भावों को देखकर देवेश की आँखें प्यार से नम हो गईं। उसने उठकर सर्वेश के मस्तक को चूमते हुए बस इतना ही कहा—

''इतना बड़ा अफसर हो जाने के बाद भी मेरा सर्वेश बिलकुल बदला ही नहीं। मेरी आँखों के सामने तो यह अब भी वही है जब पिता जी उसको पाँच साल का छोड़कर चल बसे थे और मैं 15 वर्ष का था। माँ के परिश्रम एवं इसकी लगन से हम लोगों के पास अब सब कुछ है। मैं विराज से बात करता हूँ फोन आने पर। मुझे पूरा विश्वास है कि वह हमारे प्रस्ताव को अवश्य स्वीकार करेंगे।''

दिल्ली के प्रगति मैदान में एक बड़े मंडप के नीचे गीतू—संकल्प एवं रीतू—विमलेश का विवाह पर्व रचाया गया। दोनों ओर से तमाम लोगों ने आशीर्वाद दिए। एक माह के अंदर ही गीतू अमेरिका चली गई और रीतू अपने घर से मोतीबाग पहुँच गई। विराज का घर खाली तो हो गया किंतु खुशियों से भर गया था। एक साथ और इतनी जल्दी दोनों बहनों का घर से जाना ईरज को खल रहा था। विराज—नीलिमा भी दोनों बेटियों के अभाव को बराबर महसूस करते रहे किंतु वे इस बात से संतुष्ट थे कि बच्चियां अपने—अपने घरों को पहुँच गईं जहाँ वे सुखी एवं प्रसन्न भी रहेंगी। हूबी के कारण ही उनके जीवन में यह परिवर्तन आया था, यह वह भली प्रकार समझ चुके थे।

मैं जीवन के सभी कारण को समझने में इतना उलझ चुका था कि हूबी के बारे में भूल ही गया था। उदास भैरव वाहिनी हूबी के वश में अगर होता तो वह वहीं जनक नंदिनी सीता की तरह भूमिगत हो जाती। वह सम्भवतः यह सोचती रही कि मैं उठकर उसे दुलारूँगा। मेरे अवचेतन मन में हूबी की मनस्थिति अंकित न हो पाई भी। हारकर उसने अपना चेहरा धीरे—धीरे मेरी ओर घुमाया, कान हिलाए और आँखों को पुनः मेरे चेहरे पर गड़ा दिया। एक झटके से वह अपने स्थान से उठी। अपने बदन को झटका

और मेरी ओर बढ़ती गई। लगभग पाँच कदमों की दूरी को पार करने में उसने जितना समय लिया उससे मेरी बेचैनी बढ़ती गई। मन ने कहा— 'निष्ठुर न बनो। प्राकृतिक भाषा को समझो। प्रेम—प्यार स्नेह की भाषा शाश्वत होती हैं। इसको मानवीय भाषाओं की सीमाओं में बाँधा नहीं जाता। तुम समझ चुके हो कि हूबी क्या चाहती है और सम्भवतः क्यों? आगे बढ़ो। देखो तो हूबी क्या करती हैं?' मैं इस सोच के व्यूह से बाहर आने का प्रयास ही करता रहा और हूबी बिल्कुल मेरे सामने आकर खड़ी हो पहले तो कुछ पलों के लिए, घूमती रही और फिर धीरे—धीरे सामने का दाहना पाँव मेरे ओर उठाया। मैं समझ गया कि वह अभिवादन कर रही है। मैंने अपने दोनों हाथों से उसके पाँव को सहलाया और फिर उसकी गर्दन को, उसका साहस बढ़ा। फिर क्या था प्यार का जो समुद्र उसने मेरे ऊपर उड़ेला वह अकल्पीय था। पहले उसने मेरे दोनों हथेलियों को खूब चाटा। फिर वह हाथों को अपनी लम्बी—लम्बी जबान से सहलाती—चाटती रही। थोड़ी देर बाद उसने मेरी हथेली को अपने बड़े—बड़े दांतों की बीच भर लिया। डर लग रहा था किंतु अब तक मेरी समझ में आ चुका था कि वह सृष्टि का सारा प्यार मेरे ऊपर उड़ेलना चाह रही थी। जितनी देर मैं विराज के साथ रहा हूबी मेरे पास ही बैठी रही। अगर कभी किसी ने पुकारा तो गई और फिर वापस आ गई। प्यार की प्रक्रिया बराबर चलती रही।

मेरी समझ में अब तक इतना आ चुका था कि इस भैरव दाहिनी से मेरा किसी पूर्व जन्म का नाता रहा है। उसके इस शरीर में किसी पुण्य आत्मा का निवास है। मैंने जब अपने भावों को विराज के सामने रखा तो वह भावुक हो उठा। विराज ने कहा—

''जबसे हूबी इस घर में आई है मेरी किस्मत बदल गई है। घर मिला। बेटियों की शादियाँ हुईं अच्छे—से—अच्छे घर में। गाँव के सारे झगड़ों का अंत हो गया। समाज में प्रतिष्ठा मिल रही है। हूबी की खूबी यह है कि यह वही खाती हैं जो मैं खाता हूँ और मेरे खाने के बाद ही खाती है। हमेशा नीलिमा के नजदीक ही सोती है। यह मुझको मेरे एक विद्यार्थी ने उपहार—के रूप में दिया था, यह कहकर कि सर यह आपके काम आएगी, इसे प्यार से रखिए। नीलिमा तो अब इसको अपनी बेटियों से भी अधिक प्यार करती है। मुझसे से भी ज्यादा।''

॥

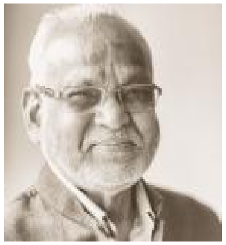

नाम : डॉ. कृष्ण कुमार

जन्म : 14 फरवरी 1940, जन्मस्थान- बहराइच, उत्तर प्रदेश, भारत

शिक्षा : बी.टेक. (IIT Madras 1964), पी.एच.डी. (इंजीनीयरिंग) (सर्रे विश्वविद्यालय यू.के., 1980)

साहित्यिक उपलब्धियां : गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय की स्थापना (1995), अध्यक्ष कार्यकारिणी समिति छठा विश्व हिन्दी सम्मेलन लन्दन (1999), अंतरराष्ट्रीय बहुभाषीय संगोष्ठी, 22वें अंतरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन, त्रिदिवसीय क्षेत्रीय हिन्दी सम्मेलन का आयोजन (क्रमशः 2005, 2006 एवं 2011), गीतांजलि सर्किल फॉर यंग क्रिएटिव राइटर्स की स्थापना (2012)

कविता संग्रह (हिन्दी) : मैं अभी मरा नहीं, ज्ञान भारती दिल्ली, 1999, चिंतन बना लेखनी मेरी, ज्ञान गंगा दिल्ली, 2003, लेकिन पहले इंसान बनो, विचार कविता दिल्ली, 2005, अक्षर-अक्षर गीत बने (गीत संग्रह), शांति प्रकाशन इलाहाबाद, 2009, एक त्रिवेणी ऐसी भी, ग्रन्थ अकादमी दिल्ली, 2009, नर्तन करते शब्द, प्रतिभा प्रतिष्ठान दिल्ली, 2012, कैंसर कविताएं अनामिका प्रकाशन इलाहाबाद, 2016, गुनगुनाते शब्द (गीत संग्रह), प्रभात प्रकाशन दिल्ली, 2016, कहानी संग्रह : क्यों, क्यों और आखिर क्यों, ग्रन्थ अकादमी दिल्ली, 2012, और कथाएं ऐसी भी, नेशनल बुक ट्रस्ट दिल्ली, 2014

निबंध संग्रह (हिन्दी) : भाषा, साहित्य और राष्ट्रीयता, सस्ता साहित्य मंडल दिल्ली, 2011, आज का विचार, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 2014

निबंध संग्रह (अंग्रेजी) : थीम फॉर टुडे, वाणी प्रकाशन दिल्ली, 2014

(शेष अगले फ्लैप पर)

संपादित कृतियां :

बहुभाषीय काव्य संग्रह अंग्रेजी में अनुवाद के साथ : धनक, स्टार प्रकाशन दिल्ली, 1999, गीतांजलि पोएम्स फ्रामईस्ट ऐंडवेस्ट, गीतांजलि प्रकाशन यूं.के., 2000, ओएसिस पोएम्स, गीतांजलि प्रकाशन यूं.के., 2003, काव्य तरंग, गीतांजलि प्रकाशन यूं.के., 2006, मल्टी फेथमल्टी लिंगुअल पोएम्स फॉर पीस ऐंड टु गेदरनेस, गीतांजलि प्रकाशन यूं.के. 2008, पोएम्स ऑफ होप (बच्चों के कविताओं का संग्रह), गीतांजलि प्रकाशन यूं.के., 2016

अन्य हिन्दी में : सूरज की सोलह किरणें, गीतांजलि समुदाय के सदस्यों का हिन्दी काव्य संकलन, ग्रन्थ अकादमी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2008, द्वितीय संस्करण 2009, अपनी उम्मीदों के साथ गीतांजलि समुदाय के सदस्यों का हिंदी कहानी संग्रह, शिल्पायन प्रकाशन दिल्ली, 2012, हिंदी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम, यू.पी. हिंदी संस्थान, 2015

शोधग्रन्थ प्रकाशित : ब्रिटेन के निवासी प्रवासी साहित्यकार डॉ. कृष्ण कुमार के समग्र साहित्य का अनुशीलन, पी.एच.डी., विक्रम विश्वविद्यालय, मार्च 2016

मुख्य सम्मानः हम एक हैं भोपाल, द्वारा राष्ट्रीय एकता सम्मान (2004), यू.पी. हिन्दी संस्थान द्वारा 'प्रवासी भारतीय हिन्दी भूषण सम्मान' (2006), रामायण केन्द्र मॉरीशस द्वारा 'महर्षि अगस्त्य सम्मान' (2008), भारत सरकार द्वारा 'विश्व हिन्दी सम्मान' (2012), इटावा हिन्दी सेवा निधि द्वारा 'डॉ. दुखन राम विज्ञान हिन्दी सेवा सम्मान' (2014), आधारशिला फाउंडेशन नैनीताल द्वारा 'राहुल सांकृत्यायन सम्मान' (2015) एवं विश्व हिन्दी परिषद दिल्ली द्वारा 'साहित्य भारतीय सम्मान' (2016)

संप्रति : विश्व विद्यालय में 2004 में अवकाश प्राप्ति के बाद स्वतंत्र लेखन एवं समाज सेवा

निवास : 21 बिडफोर्ड ड्राइव, सैली ओक, बर्मिंघम बी 296 क्यूजी, यू.के.,
ई-मेल : profdrkrishna@gmail.com,
दूरभाष : 0044 (121) 4725464